वनस्पति वाणी

वर्ष : 4 सितम्बर, 1993 अंक : 4

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
BOTANICAL SURVEY OF INDIA
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

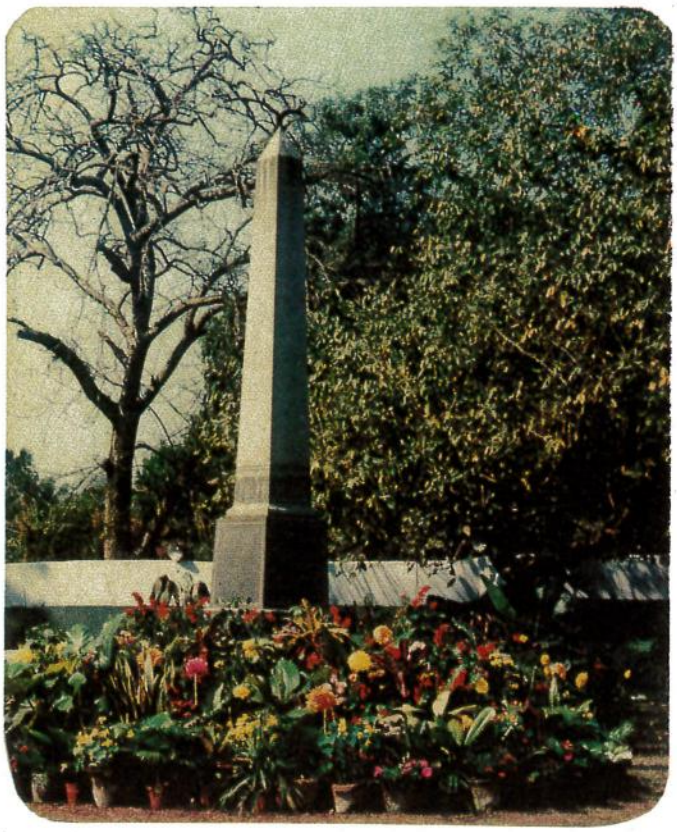

डा० नथानियल वालिच स्मृति स्तम्भ

कर्नल रॉबर्ट किड स्मृति स्तम्भ

वनस्पति वाणी

वर्ष : 4 सितम्बर, 1993 अंक : 4

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
BOTANICAL SURVEY OF INDIA

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

मुखपृष्ठ का चित्र : वैंडा आर्किड की एक जाति का एक मनोरम पुष्प

सम्पादक मण्डल

डा० बी० डी० शर्मा : *प्रधान सम्पादक*
डा० डी० एम० वर्मा : *सदस्य*
डा० आर० के० चक्रवर्ती : *सदस्य*
डा० वि० मुद्गल : *सदस्य*
श्री ए० आर० के० शास्त्री : *सदस्य*
डा० एस० एल० गुप्त : *सदस्य*

सम्पादन सहयोग
नवीन चौधरी

वनस्पति वाणी में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता, प्रामाणिकता तथा व्यक्त विचारों के लिए लेखक उत्तरदायी हैं।

विषय-क्रम

भारतीय वनस्पति उद्यान : स्मृति स्तम्भ 01
डा० रथीन कुमार चक्रवर्ती, डा० दया शंकर पाण्डेय, अभयपद भट्टाचार्या

वन की प्रार्थना (कविता) 07
उंसर वाल्ड

वृक्ष रोपें (कविता) 07
भगवती प्रसाद उनियाल

पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में नाभिकीय ऊर्जा की संभावनाएँ 08
डा० एस० एल० गुप्त

पर्यावरण और अर्थ व्यवस्था 11
नवीन चौधरी

राष्ट्रीय आर्किडेरियम प्रायोगिक उद्यान, येरकाड 13
अनीस अहमद अंसारी

भारतीय वनस्पति उद्यान में वृक्षारोपण एवं प्रधान अतिथि 14
रथीन कुमार चक्रवर्ती, हरिशंकर पाण्डेय

पश्चिमी हिमालय के अल्पज्ञात खाद्य उपयोगी पर्णांग 22
डा० आर० आर० राव एवं उषा चौधरी

सिक्किम के वानस्पतिक विविधता की एक झलक 25
डा० आर० सी० श्रीवास्तव

अम्मी मेजुस लिनः चिकित्सा में उपयोगी पौधा 28
डा० (कु) देबजानी बसु

आंगन में बहार 30
सुषमा भटनागर

सूरजमुखी कुल के सुगन्धित तेल युक्त पौधों पर एक नज़र 32
रेशमा माथुर

बागवानी एवं सजावट के फूलों का भण्डार : 35
पी० सी० पन्त

अण्डमान निकोबार द्वीप समूह के वर्षा वन 37
डा० एस० के० श्रीवास्तव

परमार वंश कालीन प्रसाधनी पौधे 40
अरुप कुमार बनर्जी, रथीन कुमार चक्रवर्ती

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के महत्वपूर्ण प्रकाशन

यदायुष्यं चिरं देवाः सप्तकल्पान्तजीविषु
ददुस्तेनायुषा युक्ता जीवेम शरदः शतम्
दीर्घा नागा नगानद्योनन्ताः सप्तार्णवा दिशः
अनन्तेनायुषा तेन जीवेम शरदः शतम्
सत्यानि पञ्चभूतानि विनाशरहितानिच
अविनाश्यायुषा तद्वजीवेम शरदः शतम्

संदेश

सितम्बर 1990 में "वनस्पति वाणी" के प्रवेशांक में हमने आपके सहयोग की आशा करते हुए विज्ञान के प्रति पूरी निष्ठा के साथ हिन्दी को विज्ञान का माध्यम बनाने का संकल्प लिया था। हम अपने ध्येय की ओर बढ रहे हैं। वैज्ञानिक शोध, गवेषणा, अनुसंधान के परिणाम को जनसाधारण तक पहुँचाना जरूरी है। विज्ञान संबंधी विषयों में सहज और सरल हिन्दी के प्रयोग की हम चेष्टा कर रहे हैं। सरल हिन्दी में जनसाधारण को विज्ञान की गूढ बातें यदि हम समझा सकें तो यह हमारी उच्चतम उपलब्धि होगी। जिन वैज्ञानिकों के सहयोग से 'वनस्पति वाणी' मुखरित रही है वे अपनी हिन्दी को सहज और सरल बनाकर हमें सफलता के पथ पर अग्रसर करेंगे ऐसा दृढ विश्वास है।

आपके सहयोग और सुझाव से हम "वनस्पति वाणी" को जन जन तक पहुँचाने की हार्दिक अभिलाषा रखते हैं।

प्रभात कुमार हाजरा
निदेशक
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

भारतीय वनस्पति उद्यान : स्मृति-स्तम्भ

डा० रथीन कुमार चक्रवर्ती, डा० दया शंकर पाण्डेय एवं अभय पद भट्टाचार्या

भारतीय वनस्पति उद्यान, हावड़ा की स्थापना कर्नल राबर्ट किड द्वारा 6 जुलाई 1787 ई० को किया गया। इसका नाम सन् 1856 ई० में रायल बाटनिक गार्डेन तथा वर्तमान नाम 26 जनवरी सन् 1950 ई० में परिवर्तित किया गया। इस उद्यान का पूर्वकालिक उद्देश्य ईस्ट इन्डिया कम्पनी द्वारा यूरोपिय देशों में आर्थिक महत्व के पौधों की खेती करके उनके महत्वपूर्ण भागों को निर्यात करने का था। कालान्तर में यह वनस्पति विज्ञान व तत्संबन्धित विषयों का एक प्रमुख अनुसन्धान केन्द्र होकर अपने वैज्ञानिक क्रिया-कलापों विशेषकर पौध सर्वेक्षण पौध-प्रवेशन आदि में प्रभावशाली विस्तार किया। इसके गौरवशाली इतिहास के बनाने तथा वनस्पति अनुसंधान में महत्वपूर्ण योगदान का श्रेय कई महान विभूतियों/वैज्ञानिकों को जाता है जिनमें कर्नल राबर्ट किड के साथ-साथ डा० विलियम राक्सबर्ग, डा० विलियम केरी, डा० एम० एच० कोलब्रुक, सर बुकानन हैमिल्टन, डा० नाथनियल वालिच, डा० फॉक्नर, डा० थामस थामसन्, डा० थामस एन्डरसन, सी० बी० क्लार्क, सर जार्ज किंग, डा० (सर) डैविड प्रेन, कर्नल ए० टी० गेज, सर विलियम स्मिथ, सी० सी० काल्डर, डा० जे० एम० काउन, डा० के० पी० बिश्वास, डा० डी० चटर्जी तथा डा० सेन आदि प्रमुख हैं, इनमें से कुछ व्यक्तियों की यादगार को चिरस्थायी करने हेतु भारतीय वनस्पति उद्यान में स्मृति-स्तम्भ बनाये गये हैं जिसमें उनकी जीवनी, क्रिया-कलापों, एवं वैज्ञानिक उपलब्धियों पर प्रकाश डाला गया है।

कर्नल राबर्ट किड स्मृति-स्तम्भ :

उद्यान के प्रतिष्ठाता एवं प्रथम अध्यक्ष कर्नल राबर्ट किड का जन्म सन् 1746 ई० में हुआ था। वे 18 वर्ष की उम्र में भारत आये एवं बंगाल इंजिनियर सेवा में एक साधारण सिपाही के पद पर नियुक्त हुए। अपनी प्रतिभास्वरूप सन् 1786 ई० में फोर्ट विलियम स्थित सैनिक परिषद के अध्यक्ष पद पर आसीन हुए। इनका एक व्यक्तिगत उद्यान शालीमार में था जिसमें बहुतायत जाति के विदेशी पौधे, जो उनके कप्तान मित्रों द्वारा उपहार स्वरूप दिये गये थे, लगाये गये थे। इसी प्रेरणास्वरूप उनका विचार एक वानस्पतिक उद्यान की स्थापना करके उसमें मसाले वाले पौधों की खेती करके उनका व्यापार करने का हुआ। आर्थिक उपयोगी पौधों तथा कीमती इमारती वृक्षों की खेती जहाज एवं अन्य जलयान के निर्माण कार्य हेतु था। अकाल के दिनों में बंगाल के जन-साधारण के लिए खाद्यदेय पौधों की खेती करने का भी उद्देश्य रहा। कर्नल किड ने सन् 1786 ई० में इस आशय का प्रस्ताव गवर्नर जनरल सर जान माकफरसन को दिया। कलकत्ता स्थित स्थानीय ईस्ट इंडिया कम्पनी के निदेशक -परिषद ने इस प्रस्ताव को अपनी संस्तुति के साथ अपने मुख्यालय लंदन को अंतिम स्वीकृति के लिए प्रेषित कर दिया। साथ ही साथ किड महोदय के व्यक्तिगत उद्यान के समीप ही लगभग 300 एकड़ जमीन पर पौध लगाने का कार्य उचित भूमि सुधार के बाद शुरु किया गया। 18 मई सन् 1787 ई० को सेना सेवा के अतिरिक्त अवैतनिक अध्यक्ष नियुक्त किया गया।

वनस्पति विज्ञान एवं तत्संबंधित विषयों का मौलिक ज्ञान न होने के बावजूद पौध-प्रेमी होने के कारण उन्होंने बहुत से जाति के विदेशी पौधों को लाकर या मंगवाकर इस उद्यान में लगाये जो भूमि तथा जलवायु की अनुपयुक्तता के कारण पूर्ण रूपेण सफल नहीं हो पाये। 6 वर्षों के कठिन तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में

अथक परिश्रम के कारण उनके स्वास्थ्य में निरन्तर ह्रास हुआ जिससे 18 मई 1793 ई० में उनकी मृत्यु हुई। उनके महान कार्य तथा प्रेरणा स्वरूप कर्नल किड का सफेद संगमरमर का समृति-स्तम्भ उनके उत्तराधिकारी डा० विलियम राक्सबर्ग द्वारा सन् 1795 ई० में बनाया गया। यह थामस बैंक द्वारा बनाई गई थी। इस उद्यान के मध्य किड, हूकर, रायोस्टोनिआ तथा अन्डर्सन एवेन्यू के संयोग-स्थल पर बनाया गया है। इसके स्तम्भ की ऊँचाई 2.5 मीटर और इसके ऊपरी गोलाकार आकृति के कलश पर अति सुन्दर नक्काशी कार्य किया गया है जिसमें स्त्रियों तथा मालियों द्वारा जल तथा जमीन पर गिराने का दृश्य है। एक माली द्वारा एक नाव में पौध लाने, एक गोलक जो बादलों, परियों, फावड़ा तथा अनाज की बालियों से घिरा हुआ, दिखाया गया है जो बहुत सुन्दर ढंग से नक्काशी कार्य करके पौधों तथा जल का मानवीय जीवन में प्रकृति के साथ संबंध को दर्शाता है। स्तम्भ पर निम्नलिखित लेख अंकित है:

"राबर्ट किडिवो मिल ट्रिब हार्ट हुजुस फाउन्डेटोरी पोस्यूट ए० क० एम० डी० सी० सी० एक्स सी० वी० "

स्तम्भ की सुरक्षा हेतु एक वृत्ताकार (लगभग 1.30 मीटर ऊँची तथा 107.40 मीटर परिधि में) लोहे की जालीनुमा चारदिवारी (लगभग 1 मीटर चौड़े द्वार सहित) स्मृति-स्तम्भ के आधार से 13.25 मीटर दूरी पर सन् 1983-1984 ई० में लगाया गया। भीतर चारों तरफ सुन्दर हरियाली के मध्य मौसमी फूल लगाकर स्थान को आकर्षक एवं मनोहर बना दिया गया है। इनकी यादगार में भारतीय वनस्पति उद्यान में 'किड एवेन्यू' है।

विलियम राक्सबर्ग स्मृति-स्तम्भ :

कर्नल किड की मृत्यु के बाद सर विलियम राक्सबर्ग भारतीय वनस्पति उद्यान के प्रथम वैतनिक अध्यक्ष पद पर 29 नवम्बर सन् 1793 ई० में कार्य भार संभाले। इनके द्वारा भारत के कई स्थानों की वनस्पतियों का गहन सर्वेक्षण, अध्ययन तथा बहुल संख्या में नई प्रजातियों के आविष्कार में विशिष्ट योगदान रहा जिनकी आज भी वनस्पति-विज्ञान के अध्ययन तथा शोध में महत्वपूर्ण स्थान है। इन्हीं कारणों से इनको 'फादर आफ इन्डियन बाटनी' (भारतीय वनस्पति विज्ञान का जनक) माना जाता है। इन का जन्म यॉर्कशायर के अंडरवुड में 3 जून सन् 1751 ई० में हुआ था। ये 1776 ई० में एडिनबर्ग विश्वविद्यालय से मेडिसिन की उपाधि पाने के बाद मद्रास स्थित ईस्ट इंडिया कम्पनी में कार्यरत हुए। वे वहीं पर भारतीय वनस्पति के अध्ययन हेतु डा० कोपेनिग के सम्पर्क में आये। फलस्वरुप एक कीर्तिमान पुस्तक 'प्लान्ट्स आफ़ दी कोस्ट आफ कोरोमंडल' तीन खन्ड में राक्सबर्ग के नाम मे प्रकाशित हुई। खराब स्वास्थ्य के कारण उनको दो बार स्वास्थ्य सुधार हेतु इंग्लैंण्ड जाना पड़ा। इस बीच 1799 एवं 1808 में वापस आये परन्तु पुनः पैत्रिक गृह एडिनबर्ग चले गये जहां 18 परवरी 1815 को 64 वर्ष की आयु में देहान्त हो गया।

डा० राक्सबर्ग के मरणोपरान्त राक्सबर्ग का 'फ्लोरा इन्डिका' 2 अंकों में सन् 1820-1824 ई० में बाप्टिस्ट मिशन मुद्रणालय, श्रीरामपुर से उनके मित्र विलियम केरी द्वारा प्रकाशित कराया गया जिसका संशोधित प्रकाशन 3 अंको में सन् 1832 ई० में हुआ। इनका अन्य मुख्य कार्य 'हार्ट्स बंगालेन्सिस' है जिसका प्रकाशन 1844 ई० में विलियम केरी के संपादन से श्रीरामपुर मुद्रणालय से हुआ। राक्सबर्ग 2500 से अधिक पौधों का रंगीन चित्र जिनका वर्णन 'फ्लोरा इन्डिका' तथा 'प्लान्टस आफ दी कोरोमंडल कोस्ट' में है, भारतीय वनस्पति उद्यान में छोड़ गये हैं। यह 200 वर्षों के बाद भी काफी स्पष्ट तथा सुन्दर हैं और आज भी भारत तथा

विश्व के अनेक वैज्ञानिकों तथा शोध-कर्ताओं का ध्यान आकृष्ट करके कार्य हेतु प्रेरित करते हैं।

राक्सबर्ग महोदय की यादगार में एक स्मृति-स्तम्भ सन् 1822 ई० में लगाया गया जो उद्यान के कुर्ज तथा किंग्स एवेन्यू के संयोग स्थल पर व विशाल वट वृक्ष तथा नवनिर्मित द्विशतवार्षिकी द्वार के मध्य है। यह 6 खम्भों वाले षठाकृत छत के नीचे बनाया गया है। स्मृति-स्तम्भ पर बिशप हेबर द्वारा लैटिन भाषा में लिखे लेख का अर्थ निम्नलिखित हैः

"आप जो भी हों/यदि यह स्थान आप के मिठास-युत भावना से प्रेरित हो/या आप को ईश्वर के प्रति आदर-भाव की प्रेरणा देता हो/आप की अत्यधिक प्रतिष्ठा रखें/राक्सबर्ग/इस उद्यान के पूर्व अध्यक्ष/वनस्पति विज्ञान के एक अत्यधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति/एवं एक सफल योजना-विशेषज्ञ/या वास्तविक आह्लाद रखने वाले/उनके देशवासियों द्वारा उनके अवशेष संग्रहित/ यहीं उनकी प्रतिभाशाली व्यक्तित्व जीवित हैं/आप अत्यधिक आनन्दित होंगे/उनकी चिरस्थायी स्मृति में उनके जीवित मित्र गण/ सन् 1822 ई०"

इनकी स्मृति में उद्यान के अंदर 'राक्सबर्ग भवन' है जिसका निर्माण सन् 1795 ई० में हुआ था तथा 'राक्सबर्ग एवेन्यू' भी है।

डा० नाथानियल वालिच स्मृति-स्तम्भः

डा० नाथानियल वालिच डा० फ्रान्सिस हैमिल्टन के अध्यक्ष पद से त्यागपत्र देने के बाद भारतीय वनस्पति उद्यान के कार्यवाहक अध्यक्ष सन् 1815 में नियुक्त किये गए एवं एक वर्ष के बाद ही सेवा-निरस्त कर दिये गये। पुनः सन् 1817 से 1846 की अवधि में स्थायी अध्यक्ष के रूप में कार्य किए।

डा० वालिच का जन्म 28 जनवरी सन् 1786 ई० में कोपेनहागेन में हुआ था। वे प्रसिद्ध प्राध्यापक मार्टिन बेल के विद्यार्थी थे। मास्टर आफ मेडिसिन की उपाधि पाने के बाद सन् 1807 ई० में डैनिस चिकित्सा-सेवा में श्रीरामपुर में नियुक्त हुए।

वालिच महोदय अल्पकाल में ही एक कुशल, प्रतिभावान वानस्पतिज्ञ के रुप में उभरे। वे भारत के विभिन्न भागों सहित नेपाल के पौधों की खोज किये जिसमें अनेक नई प्रजातियाँ सिद्ध हुईं। बर्मा से उर्वशी (Amherstia nobilis Wall.) लाकर लगाये जो विश्व के कई स्थानों पर अपने मनोहर फूलों के कारण प्रसिद्ध है। डा० विलियम राक्सबर्ग के मरने के बाद 'फ्लोरा इन्डिका' का प्रकाशन सन् 1820 ई० में विलियम कैरी के सहयोग से श्रीरामपुर छापाखाने से हुआ। इनके द्वारा किये गये नेपाल के पौधों का संकलन तथा अन्वेषण-कार्य 'टेन्टामेन फ्लोरी नेपालेन्सिस इलेस्ट्रटी' 1824-26 ई० में प्रकाशित हुआ। इनका मुख्य सूचीबद्ध कार्य 'ए न्यूमेरिकल लिस्ट आफ़ ड्राइड प्लान्ट्स इन दी ईस्ट इन्डिया कम्पनीज म्यूजियम' का मुद्रण सन् 1828-1849 ई० में लन्दन में किया गया जो 'वालिच केटालाग' से जाना जाता है। इसके अतिरिक्त इनका मुख्य कार्य 'प्लान्टी एशियाटिकी एरियोर्स' है जो तीन खन्डों में सन् 1830-1832 ई० में लंदन से प्रकाशित हुआ। ये सन् 1846 ई० में उद्यान का अध्यक्ष पद डा० एच० फॉक्नर को सौंपकर स्वदेश चले गये जहाँ 1854 में इनका निधन हुआ।

डा० वालिच तथा इनके मित्रों एवं विदेशी संस्थाओं के साथ सन् 1794 से 1831 ई० में मध्य पत्राचार जो रायल बॉटानिक गार्डेन किउ में संरक्षित थे वे सभी भारतीय वनस्पति उद्यान को सन् 1888 ई० में सौंप दिये गए।

लगभग 5 मीटर ऊँचा वालिच स्मृति स्तम्भ उद्यान के अनुभाग 4 में कोलेट तथा किड एवेन्यू के संयोग स्थल पर है। स्तम्भ के उत्तरी भाग पर लैटिन भाषा में लिखे शिला लेख का हिन्दी रूपान्तर निम्नलिखित हैः

"नाथानियल वालिच एम० डी०, एफ० आर० सी० एस० की प्रतिष्ठा में/ 30 वर्ष तक उद्यान के अध्यक्ष/ एक अति प्रतिष्ठित वानस्पतिज्ञ एवं श्रान्त पौध अन्वेषक/ ओ बी 1854"

इनकी यादगार में एक सड़क 'वालिच एवेन्यू' है जो उद्यान में कालेज द्वार से प्रारम्भ होकर स्कॉट एवेन्यू तथा विश्राम गृह के निकट तक जाता है। इसके अतिरिक्त एक टीले का नाम भी वालिच के नाम पर उद्यान के अनुभाग संख्या 4 में है।

विलियम ग्रिफिथ स्मृति स्तम्भः

विलियम ग्रिफिथ भारतीय वनस्पति उद्यान के कार्य वाहक अध्यक्ष डा० नाथानियल वालिच के अवकाश के समय सन् 1842-1844 ई० में थे। इनका जन्म 4 मार्च सन् 1810 ई० में हैम कोमोन, सरे में हुआ था। सन् 1832 ई० में ईस्ट इन्डिया कम्पनी में सहायक शल्य चिकित्सक के रूप में कार्य करने के कुछ समय बाद ही इनका चयन बर्मा के तीनास्सेरिम प्रान्त के पौध एवं उद्भिद अन्वेषण हेतु बंगाल सरकार द्वारा किया गया। डा० नाथानियल वालिच के सहायक के रुप में सन् 1835 ई० में आसाम के चाय के जंगलों में पौध अन्वेषण के बाद ये रंगून, खासी की पहाड़ियों, भूटान, खूरेसान, अफगानिस्तान, मलाका आदि स्थानों में पौध-अन्वेषण किये। डा० वालिच के अवकाश समाप्ति के बाद विलियम ग्रिफिथ पुनः मलाका पौध-अन्वेषण हेतु चले गये। वहीं यकृत-रोग से बुरी तरह आक्रान्त होकर 35 वर्ष की आयु में ही इनका निधन 9 फरवरी, 1945 ई० में हुआ।

वनस्पतिज्ञ-विज्ञान में विशेष अभिरूचि के अतिरिक्त इनका गहन झुकाव स्तनपायी विज्ञान, कीट विज्ञान तथा पक्षी विज्ञान में भी था। विलियम ग्रिफिथ की मुख्य पुस्तकें 'आइकोन्स प्लान्टेरूम एशियाटिका' कलकत्ता, 1847-1854 ई० में पामूस आफ़ ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कलकत्ता, 1850 ई० में हैं। इनके कई वैज्ञानिक लेख ' कलकत्ता, जर्नल आफ़ नेचुरल हिस्ट्री ' 'जर्नल आफ़ दी एशियाटिक सोसायटी आफ़ बंगाल', 'ट्रान्जैक्सन आफ़ दी लिनियम सोसायटी लन्दन' इत्यादि में प्रकाशित हुए थे। 1.70 मीटर उँचा सफेद संगमरमर का बना स्मृति-स्तम्भ उद्यान के अनुभाग संख्या 16 लघु ताड़ गृह के पूरब दिशा में स्थित है जिसकी चारों फलक पर लेख हैं। पश्चिमी फलक पर अरबी भाषा में उनके पूर्णता तथा बड़प्पन संबंधित लेख अंकित हैं। इनकी स्मृति में उद्यान के अंदर 'ग्रिफिथ एवेन्यू' भी है।

विलहेल्म सल्पिज़ कुर्जः

विलियम सल्पिज़ कुर्ज भारतीय वनस्पति उद्यान के अन्दर स्थित पादपालय के संरक्षक सन् 1864 ई० में के उत्तरार्द्ध में कार्यरत हुए। ये डा० एन्डरसन, अध्यक्ष, भारतीय वनस्पति उद्यान के निवेदन स्वरूप उपरोक्त पद पर आसीन हुए।

पूर्वी द्वीप समूह तथा भारतीय वनस्पति उद्यान के कुशल कार्य योग्यता के कारण सर डिट्रिच ब्रान्डिस, महानिरीक्षक वन, भारत सरकार ने इनको दो बार अन्डमान द्वीप समूह भेजा जहाँ उन्होंने मूल्यवान वन संपदा विशेषकर इमारती लकड़ियों तथा तत्संबंधित पदार्थों का अध्ययन उनके व्यापारिक उपभोग को ध्यान में रखते हुये वनस्पति-जात का अध्ययन किया। इसके बाद वे बर्मा के कई स्थानों का पौध-अन्वेषण किये फलस्वरूप इनकी प्रमुख पुस्तक 'फारेस्ट फ्लोरा आफ़ बर्मा' 2 अंकों में 1877 ई० में प्रकाशित हुई। इस कार्य के बाद ही कुर्ज महोदय डच इन्डीज़ के लिये पुनः

पौध-सर्वेक्षण वनस्पति जात के लिए सम्पदा तथा साथ ही साथ स्वास्थ लाभ हेतु कार्यारम्भ किये। दुर्भाग्य से रास्ते में ही गंभीर अस्वस्थता तथा रूग्णता के कारण पुलो-पीनाना में 16 जनवरी, 1878 ई० को दिवंगत हुए।

सन् 1846 से 1878 ई० के मध्य इनके लगभग 60 वैज्ञानिक शोध कार्य भारतीय तथा विदेशी वनस्पति पत्रिकाओं ने प्रकाशित किए। इनके प्रमुख कार्य 'रिपोर्ट आन दी वेजीटेशन आफ़ दी अन्डमान आइलैन्डस' कलकत्ता, 1870 ; 'कान्ट्रीव्यूशन्स टुवार्ड्स ए नालेज आफ़ दी बर्मा फ्लोरा, कलकत्ता, 1874-1877; 'प्रीलीमनरी रिपोर्ट आन दी फारेस्ट एण्ड अदर वेजीटेशन आफ़ पेगू, 'कलकत्ता, 1875; 'बम्बू एण्ड इट्स यूज', कलकत्ता, 1876; 'फारेस्ट फ्लोरा आफ़ ब्रिटिश बर्मा, ' अंक 1.2, 1877 हैं।

कुर्ज स्तम्भ उद्यान के अनुभाग सं० 9, पुष्प उद्यान के पीछे इनके मित्रों द्वारा बनाया गया है। यह चतुर्दिक वर्गाकार सीढ़ी पर संगमर्मर का है। जो चार खम्भों पर आधारित है इसकी ऊँचाई 1 मीटर है। दक्षिणी फलक पर अंग्रेजी में लिखित लेख का अर्थ इस प्रकार हैः

"सुल्फ कुर्ज इस उद्यान के पादपालय के संरक्षक/जन्म 8 मई, 1834 ई० में आउगूसबर्ग में। मृत्यु 16 जनवरी, 1878 ई० पेनान्ग में।"

उत्तरी फलक पर लिखित लेख इस प्रकार हैः "मलाया द्वीप समूह, बर्मा, भारत में उनके (कुर्ज) द्वारा वानस्पतिक शोध कार्यों के लिए उनके मित्रों द्वारा बनाया गया। विशिष्ट शिल्पकार डाउलिंग द्वारा नक्काशी कार्य किया गया।"इनके यादगार में 'कुर्ज एवेन्यू' उद्यान के अंदर है।

विलियम जैकः

विलियम जैक का जन्म 29 जनवरी 1795 ई० में हुआ था। भारतीय वनस्पति उद्यान के तत्कालीन अध्यक्ष डा० नाथानियल वालिच से इनका 19 जुलाई, 1818 ई० में पत्राचार हुआ।

सुमात्रा के तत्कालीन राज्यपाल सर थामस स्टाफोर्ड राफ्लेस के भारतीय वनस्पतिय उद्यान में परिभ्रमण के दौरान सन् 1880 में जैक का परिचय डा० वालिच द्वारा कराया गया। फलस्वरूप जैक की नियुक्ति सर राफेल्स के अधीन हुई। इस प्रकार सुमात्रा बैन्कूलेन तथा आसपास के द्वीप समूहों की प्राकृतिक वन सम्पदा के अन्वेषण का कार्य इन्होंने 1818-1821 के मृध्य किया और 'मलायन मिसलानीस' में प्रकाशित किये। इसके अतिरिक्त इनके वनस्पति विज्ञान सम्बन्धित शोध पत्र कलकत्ता जर्नल ऑफ नेचुरल हिस्ट्री, हुकर्स बोटानिकल मैगजीन, हुकर्स जर्नल ऑफ बॉटनी, ट्रान्जैकशन ऑफ दी लिनियन सोसायटी आदि में प्रकाशित हैं।

जैक महोदय दुर्बल शरीर के कारण कभी स्वस्थ नहीं रहते थे फलस्वरुप इनकी मृत्यु मात्र 27 वर्ष की आयु में 15 सितम्बर, सन् 1822 ई० में मलेरिया के प्रभाव से हुई।

जैक स्मृति-स्तम्भ उद्यान के अनुभाग संख्या 17 में वृहद ताड़ गृह के निकट पूरब दिशा में है जिसकी ऊँचाई लगभग 1.7 मीटर है। सफेद संगमरमर वाले चतुर्दिक फलको पर अभिलेख हैं। उत्तरी फलक पर लिखित वाक्यों का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार हैः

"मलायन मिसलानीसः यह पत्थर सहायक शल्य चिकित्सक विलियम जैक की स्मृति में प्रतिष्ठित कम्पनी बाग में स्थित है जो अपने प्रारम्भिक जीवन में एक अत्यधिक प्रखर, प्रकृति प्रदत्त बुद्धि तथा साहस के साथ अल्पायु में ही अंग्रेजों द्वारा शासित पूरब के देशों के

पौधों का गहन अध्ययन करके महत्वपूर्ण योगदान दिये। इनके द्वारा लिखित ऐतिहासिक तथा वनस्पतियों संबंधित विस्तृत पांडुलिपि 'फेम' नामक समुद्री जहाज में 5 फरवरी, 1824 ई० में जलकर नष्ट हो गई। इनके कार्यों का एक अमिट छाप पहले किये गये शोध-पत्रों/लेखों एवं कई समूह के पौधों का गहन अन्वेषण तथा अध्ययन से ही स्पष्ट रुप से समझने योग्य है जो यहाँ नक्काशी किया गया है।" 'जैक एवेन्यू' भी भारतीय वनस्पति उद्यान में विलियम जैक की याद दिलाता है।

उपरोक्त वैज्ञानिकों की स्मृति स्तम्भ तथा एवेन्यू के अतिरिक्त भारतीय वनस्पति उद्यान में कुछ वैज्ञानिकों तथा अंशदाताओं के सम्मान तथा यादगार स्वरुप झीलों के नाम क्रमशः सादिर झील, जनार्दन झील, दीवान झील, किंग झील व प्रेन झील तथा रास्तों के नाम वाइट्स एवेन्यू, हैमिल्टन्स एवेन्यू, कोलेट्स एवेन्यू, ब्रान्डिस एवेन्यू, फॉक्नर एवेन्यू, हुकर्स एवेन्यू, एन० एन० पाथ, स्काट्स एवेन्यू, क्लार्कस एवेन्यू, देव ब्रत एवेन्यू तथा डा० कालीपद् विश्वास पैवेलियन व जितेन्द्र नाथ सेन हाल भारतीय वनस्पति उद्यान में हैं।

विशाल वट वृक्ष के मुख्य तना के वास्तविक स्थान को दर्शाने हेतु एक शिला-स्तम्भ सन् 1981 ई० में स्मृति रुप बनाया गया जो गोलाकार आकृति के ऊपर त्रिकोणाकृत है। आधार से स्तम्भ की ऊँचाई लगभग 1.67 मीटर है। सन् 1986 ई० में शिला-स्तम्भ के निचले भाग पर सफेद तथा ऊपर काले संगमरमर पत्थर लगाकर एक-एक फलक पर हिन्दी, बंगला तथा अंग्रेजी में वृक्ष के मुख्य तना संबंधित संक्षिप्त ऐतिहासिक ब्यौरा लिखा है जिसका अनुवाद इस प्रकार हैः

"मुख्य तना इसी स्थान पर था, जो फफूँद के आक्रमण के कारण सन् 1925 ई० में निकाल दिया गया। इसकी परिधि 1.7 मीटर की ऊँचाई पर 16.5 मीटर थी।"

ये स्मृति-स्तम्भ इन महान विभूतियों के कार्यों से हम सभी को मार्ग-दर्शन एवं प्रेरणा प्रदान करते हैं।

वन की प्रार्थना

उंसर वाल्ड
हिन्दी अनुवादः वि० मुद्गल

शीत ऋतु की ठंडी रातों में,
तुम्हारे घर की ऊष्मा
ग्रीष्म ऋतु में तपते सूर्य की कड़ी धूप में
छाया का आवरण
तुम्हारी छत का, मेज का, नाव का,
पालने का एवं
यहां तक कि अर्थी का ढांचा
धनुष की कमानी
समस्त प्राणियों का भोजन
एवं सौंदर्य प्रतीक
मैं हूँ
इसलिए मेरी प्रार्थना सुनो
मुझे मत उजाड़ो

वृक्ष रोपें

भगवती प्रसाद उनियाल
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून

दें मौन पावस को निमंत्रण
जल स्रोत का साधन बनें ये।

इनके आहत तन बदन पर
अब न खंजर और घोंपें।।

बढ़ते प्रदूषण का हलाहल
कंठ में अपने समेटे।

जी रहे किसके लिये ये
कुछ विचारें, कुछ तो सोचें।।

अर्चना के पात्र हैं ये
देह हैं हम, सांस हैं ये।

त्याग की जीवंत मूरत
यत्न से इनको संजोयें।।

अब तलक होते रहे हैं
सौ जान से कुर्बान हम पर।

अस्तित्व खुद का ही बचाने
बंधु! आओ वृक्ष रोपें।।

पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में नाभिकीय ऊर्जा की संभावनाएं

डॉ एस० एल० गुप्त
माइक्रोबायलॉजी यूनिट,
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा

वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय पारिस्थतिकी असंतुलन का आतंक पूरे विश्व भर में व्याप्त हैं। यह असंतुलन वनों की अंधाधुंध कटाई, बढ़ते औद्योगिकीकरण, खाड़ी देशों में उत्पन्न तेल संकट और फिर ऊर्जा के अन्य श्रोतों जैसे नाभिकीय ऊर्जा का विद्युत उत्पादन हेतु बढ़ते योगदान तथा उससे उत्पन्न रिसाव की घटनाओं के रूप में वैज्ञानिक समाज को चिन्तित कर रहा है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के थ्री माइल आईलैण्ड एवं सोवियत संघ के चेरनोबिल परमाणु संयन्त्र में घटित दुर्घटना के कारण पर्यावरण सुरक्षा के प्रति वैज्ञानिकों का दायित्व और बढ़ गया है।

पर्यावरण सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए भारत के नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य सन् 2000 ई० तक 100,000 मेगावाट कुल लक्ष्य का 10 प्रतिशत 10,000 मेगावाट नाभिकीय ऊर्जा से प्राप्त करना है, जिसकी पूर्ति के लिए देश के विभिन्न अंचलों में स्थापित छः नाभिकीय ऊर्जा केन्द्र सचेष्ट है। आवश्यकता है कि नाभिकीय ऊर्जा से पर्यावरण को होने वाले सम्भावित खतरों एवं बाद में इनके रोकथाम पर विस्तृत विवरण एवं परिचर्चा हो जिससे नाभिकीय ऊर्जा का पर्यावरण में सम्बन्ध एवं महत्व दृष्टिगोचर हो सके।

पृथ्वी की सतह से लगभग 20 कि० मी० ऊँचाई पर व्याप्त 'ओजोन पट्टी' में करीब 4 अरब टन ओजोन गैस है जो सूर्य से आने वाली घातक पराबैंगनी किरणों को धरती तक पहुँचने से रोकती है और इससे उत्पन्न होने वाली त्वचा कैंसर की सम्भावना को खत्म कर देती है। जैसाकि हम जानते हैं कि परमाणु बम के निर्माण एवं विद्युत उत्पादन दोनों में विखण्डन की प्रक्रिया होती है और एक मेगाटन शक्ति के परमाणु बम विस्फोट से 5000 टन नाइट्रिक ऑक्साइड उत्पन्न होता है। नाइट्रिक ऑक्साइड का एक अणु ओजोन के कई हजार अणुओं को नष्ट कर सकता है और एक मेगाटन परमाणु विस्फोट 50 लाख टन ओजोन को नष्ट करने हेतु पर्याप्त है। इस गणना से एक हजार मेगाटन क्षमता का विस्फोट सम्पूर्ण ओजोन पट्टी को नष्ट कर सकता है। जबकि वर्तमान में दोनों महाशक्तियों के पास 15 हजार मेगाटन शक्ति के परमाणु बम हैं। पर्यावरण के प्रदूषित होने की भयावहता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि स्ट्रटोस्फियर में व्याप्त ओजोन परत के क्षीण होने की स्थिति में पृथ्वी पर जीवन असंभव हो जायेगा।

नाभिकीय ऊर्जा से विद्युत उत्पादन का प्रत्येक पहलू प्रायः कुछ-न-कुछ पर्यावरणीय समस्या अवश्य उत्पन्न करता है जिसमें से विकिरण का खतरा असंख्य एवं सर्वविदित है। प्राकृतिक हवायें, वायुमण्डलीय मिश्रण इस विकिरण को बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुए हैं। 1950-60 दशक के मध्य संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ ने अनेक वायुमण्डलीय परीक्षण किये थे, जिनसे उत्पन्न रेडियोधर्मी तत्व वायुमण्डल में कई वर्षों तक व्याप्त रहने के बाद पृथ्वी की सतह पर धीरे-धीरे एकत्र होते गये, उनमें स्ट्रांशियम-90 की मात्रा बहुत अधिक थी। कैल्शियम से संरचना मिलने के कारण ये उन पशुओं की हड्डियों में विक्षेपित हो गये जिन्होंने संदूषित खेतों में उपजी उपयुक्त घास को खाया। सम्पूर्ण खाद्य श्रृंखला को प्रभावित होने से बचाने के लिए अधिकांश देशों ने वायुमण्डलीय परीक्षणों पर रोक लगा दी। इसके बावजूद वायुमण्डल में रेडियो धर्मिता बराबर बनी हुई

है। विकिरण की अधिक मात्रा विषाणुओं एवं जीवाणुओं के विरूद्ध प्रतिरक्षण की क्षमता नष्ट करने के कारण संक्रामकता फैलाने में काफी बढ़ जाती है। इससे वर्षा का जल सबसे अधिक प्रभावित होता है। हिरोशिमा और नागासाकी पर विस्फोट के बाद होने वाली वर्षा अत्यधिक तेल तत्व और रेडियो धर्मिता के कारण 'काली वर्षा' के नाम से जानी जाती है जो आज भी वहाँ की खाद्य श्रृंखला को प्रभावित कर रही है। वातावरण में भौतिक गुणों के परिवर्तन के पलस्वरूप कृषि उत्पादन में होने वाली कमी मानव अस्तित्व के लिए विनाशकारी सिद्ध हो सकती है।

नाभिकीय भट्टियों में प्रयुक्त यूरेनियम के अभिर्गमन का प्रभाव कर्मियों और सामान्य पर्यावरण पर काफी गम्भीर पड़ता है। यूरेनियम के खनन में रेडियो धर्मी तत्वों का कभी-कभी वायुण्डल में ही विस्फोट हो जाने से निम्न स्तरीय रेडियो सक्रियता काफी बड़े क्षेत्रों में फैल जाता है। इन रेडियो सक्रिय गैसों में प्रमुख क्रिप्टान-85 उच्च स्तरीय पार्श्व विकिरण फैलाने में सहायक सिद्ध हुए हैं। रेडियो धर्मिता से होने वाले गुप्त आनुवांशिक रोग मनुष्य में 15-20 वर्षों के बाद कैंसर, ल्यूकेमिया और अन्य रोगों की महामारी के रूप में फैल सकता है। जीवों एवं वनस्पतियों में रेडियो धर्मी तत्वों का जमाव पर्यावरण (वायु, जल एवं मृदा) के विषाक्त प्रदूषण के स्तर से सैकड़ों, हजारों और कभी-कभी चौथी पीढ़ी तक दिखायी पड़ता है। सन् 1945 में हिरोशिमा एवं नागासाकी पर हुए बम-विस्फोट इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

रेडियो धर्मिता के कारण सर्वाधिक क्षति वनों को होने के कारण सम्पूर्ण जैव मण्डल और पारिस्थितिकी तंत्र प्रभावित होता है। वनस्पतियों में लाइकेन और मास की रेडियो धर्मिता सहने की क्षमता जहां सबसे अधिक 30,000 रैण्ड तक होता है वहीं पेड़-पौधे 5,000 से 50,000 रैण्ड विकिरण के बीच में ही नष्ट होने लगते हैं, इससे भूमिक्षरण होता है और परिणामस्वरूप मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों का विघटन प्रारम्भ हो जाता है। वनों के विनाश के कारण वातावरण में उपस्थित कार्बन-डाइ-ऑक्साइड के पौधे प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया में उपयोग नहीं कर पाते हैं और 'हरित कक्ष प्रभाव' की समस्या उत्पन्न होने लगता है। इसके अतिरिक्त भूमि का कटाव बाढ़, नदियों-झीलों में गाद का भरना आदि अनेक समस्याएँ वनों के विनाश जुड़ी हुई हैं। स्पष्ट है कि पर्यावरण असंतुलन की समस्या ज्वलंत और विश्व व्यापी है और पृथ्वी के किसी सुदूर कोने में घटित प्रदूषण भी किसी-न-किसी रूप में सभी देशों के निवासियों पर अपना प्रभाव छोड़ता है।

पर्यावरण सुरक्षा के उपाय

नाभिकीय ऊर्जा द्वारा इस शताब्दी के अन्त तक 10 हजार मेगावाट विद्युत उत्पादन लक्ष्य के साथ ही परमाणु केन्द्रों में पर्यावरण सुरक्षा एवं प्रदूषण रोकथाम का लक्ष्य भी शामिल है। विकास के लिए आधुनिक प्रौद्योगिकी का विकास अति-आवश्यक है, साथ ही जरूरी है कि रेडियो धर्मी विकिरण से पर्यावरण को नुकसान पहुँचने की जो संभावनाएँ हों उन्हें नगण्य के बराबर कर दिया जाय। भारत के नाभिकीय संयंत्रों में इस पहलू का बराबर ध्यान रखा गया है। हाल ही में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार पर्यावरण सुरक्षा दृष्टिकोण से 1150 के दशक का प्रारम्भिक वर्ष संयत्रों के लिए बहुत ही सुखद रहा है। इस अवधि में मद्रास परमाणु शक्ति केन्द्र में एक बहुत ही अप्राकृतिक तकनीकी समस्या को भारतीय विशेषज्ञों ने दूर किया। तारापुर के 'वेस्ट मोबीलाइजेशन प्लाण्ट' ने रेडियो धर्मिता को ग्लास मैट्रिक्स में स्थिर किया। यह भारतवर्ष के लिए एक प्रथम एवं सफल प्रयास रहा। बुलन्द शहर स्थित नरोरा परमाणु विद्युत केन्द्र पर्यावरण सुरक्षा की दृष्टि से एक अत्यन्त सुन्दरतम् उदाहरण है।

इसके अलावा नाभिकीय विकिरण से पर्यावरण प्रदूषित होने से बचाने के लिए प्रत्येक कदम पर सुरक्षा के अनेकों उपाय किये जाते हैं जिससे 'असंभावित घटनाओं' को रोका जा सके। नरोरा परमाणु संयंत्र विश्व का ऐसा पहला संयंत्र है जिससे 'प्रेसराइज्ड हैवी वाटर' प्रकार की व्यवस्था है। इस प्रणाली में नाभिकीय विखण्डन के फलस्वरूप उत्पन्न रेडियो धर्मी तत्वों को रिसाव के रोकने के लिए जिरकोनियम मिश्र धातु से बने कन्टेनर्स में रखा जाता है। नाभिकीय संयंत्रों वाले पूरे भवन में दोहरी कण्टेमेण्ट प्रणाली का उपयोग होता है तथा दो कण्टेमेंट के बीच वायुमण्डल से कम दबाव के कारण भीतरी कण्टेमेण्ट में होने वाले जरा सा भी रिसाव को रोका जा सकता है। इसके अलावा इस कार्य व्यवस्था और सुरक्षा प्रणाली का नियमित समय अन्तराल पर जाँच किया जाता है।

उल्लेखनीय है कि रेडियो धर्मी तत्व वातावरण में लम्बे समय तक विद्यमान रहने के बावजूद तबतक हानि नहीं पहुँचा सकते जबतक जैविक क्रियायें बाधित नहीं होती। दृष्ट्व्य है कि नाभिकीय संयंत्रों सेउत्पन्न रेडियो धर्मी तत्वों का प्रतिशत (0.0003) तापीय विद्युत गृहों से उत्पन्न प्रतिशत (0.01) से काफी कम है। इसमें संदेह नहीं कि पृथ्वी पर बढ़ते प्रदूषण में नाभिकीय संयंत्रों का योगदान सबसे कम है। चेरनोबिल दुर्घटना कम-से-कम सात विशेष सुरक्षा प्रणालियों के उल्लंघन स्वरूप हुई थी और अगर उनको ध्यान में रखा जाता तो शायद पर्यावरणविद् नाभिकीय संयंत्रों पर ऊंगली नहीं उठाते। फिर भी इस दुर्घटना को ध्यान में रखते हुए भारत के सभी नाभिकीय संयंत्रों में 'पर्यावरण सर्वेक्षण प्रयोगशाला' की स्थापना कर दी गयी है जो संयंत्रों के काम करने के पूर्व ही वायुमण्डल में रेडियो धर्मिता का पता लगाते हैं और समय-समय पर उनकी तुलना दूसरे आँकड़ों से करने के साथ ही अपशिष्ट पदार्थों के बाह्य निर्गमन पर भी अपनी राय देते हैं।

'न्यूक्लियर कनाडा' के अनुसार जीवाश्म ईंधन से उत्पन्न 'तेजाबी वर्षा' एवं 'हरित कक्ष प्रभाव' जैसी पर्यावरणीय समस्या नाभिकीय ऊर्जा से नहीं होती। इसके अलावा पर्यावरणीय दृष्टिकोण से यह ऊर्जा अधिक गंधक मिश्रित कोयले से ज्यादा बेहतर है। इन्हीं सब कारणोंसेनाभिकीय ऊर्जा का विकास तीसरी दुनिया के देशों में बढ़ता जा रहा है जबकि विकसित देशों में स्थिति बिल्कुल विपरीत है। इस विषम परिस्थिति में जरूरत है एक आशावादी दृष्टिकोण की जिससे इसका उपयोग पर्यावरण की सुरक्षा के साथ-साथ मानव हित में किया जा सके।

पर्यावरण और अर्थव्यवस्था

नवीन चौधरी
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कलकत्ता

पर्यावरण के महत्व को समझने के लिए हम अब विवश हो रहे हैं और आने वाले दिनों में हम पूरी तरह विवश हो जाएँगे। कलतक हम बौद्धिक स्तर पर चर्चा-परिचर्चा, वाद-विवाद, गोष्ठी-संगोष्ठी आदि आयोजित कर संतुष्ट हो जाते थे परन्तु आज के बदलते परिवेश में ये सभी बेमानी हो गए हैं। हमारी पर्यावरण चेतना यदि आलस्य दिखाती है तो अब किसी क्षण एक महासंकट उपस्थित हो सकता है। पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त रखने का प्रयास अब हमारी विवशता बन गई है।

विश्व अर्थ व्यवस्था पर विचार करने के लिए जितने दृष्टिकोण हो सकते हैं उनमें पर्यावरण का महत्व इसलिए था कि अर्थ व्यवस्था कृषि का मोहताज था। कृषि का पर्यावरण से सीधा सम्बन्ध है। इस तरह पर्यावरण से अर्थ व्यवस्था का परोक्ष सम्बन्ध है। अब दोनों आमने-सामने आ गये हैं अर्थतंत्र और परितंत्र (Economy and ecosystem)पर्यावरण के महत्व की स्वीकृति के लिए अब कृषि की अन्य किसी की, दोहाई देने की जरूरत नहीं है।

ओजोन परत की सुरक्षा, जैव विविधता का संरक्षण, जलवायु में स्थिरता जैसे अहम मुद्दे अब उद्योग धंधों, कल-कारखानों को प्रभावित नहीं, नियंत्रित करेंगे। इन मुद्दों को ध्यान में रखकर कुछ नये उद्योग धंधे सामने आ सकते हैं, पुराने उद्योग धंधे अपना स्वरूप या अपनी कार्य प्रणाली बदल सकते हैं।

जिन उद्योग धंधों में दीर्घ अवधि की योजनाएँ बनाते समय पर्यावरण और पारितंत्र का खयाल रखा जाएगा उनका भविष्य सुनहरा और जहाँ ये भुलाये जाएँगे उन उद्योग धंधों का भविष्य धूमिल हो सकता है, यह निश्चित प्राय सा लगने लगा है

औद्योगिक क्रान्ति का दूसरा अध्याय आरंभ होने को है। इस नये अध्याय की भूमिका या मंगलाचरण में सौर ऊर्जा, विकसित परिवहन व्यवस्था, साफ सुथरा औद्योगिक पद्धति का स्पष्ट उल्लेख है।

विभिन्न देशों में पर्यावरण से संबंधित कर आदि समुचित व्यवस्था के माध्यम से अर्थतंत्र को नया रूप दिया जा रहा है। विपुल जनसंख्या के निर्वाह में धरती लगभग अपनी अधिकतम सीमा के निकट आ गई है। पारितंत्र को संतोषजनक स्थिति में रखने के प्रयास के बिना विश्व अर्थतंत्र को संभालने के प्रयास निरर्थक हो सकते हैं।

पर्यावरण और पारितंत्र के लिए उपयोगी सामग्री का बाजार दिन प्रतिदिन व्यापक हो रहा है। पर्यावरण से संबंधित उद्योग धंधे रोजगार के अवसर प्रदान कर रहे हैं। इन का महत्व स्वीकार नहीं करने से आय में वृद्धि और रोजगार के नये अवसर निकालना मुश्किल है।

उद्योग धंधों में विषैले पदार्थों के उपयोग कम करना आवश्यक है। कुछ उद्योग धंधों में कच्चा माल, वायु, जल आदि का उपयोग भी कम हो सकता है। कल कारखानों से होने वाले पर्यावरण प्रदूषण को रोकने के लिए और उपायों पर शोध व अनुसंधान हो रहा है।

पर्यावरण के बढ़ते तापमान एवं पर्यावरण प्रदूषण को कम करने के प्रयास काफी सक्रिय होने की आशा है। इस सिलसिले में औद्योगिक क्रान्ति का दूसरा अध्याय

आशातीत गति से आगे बढ़ेगा। स्वचालित वाहनों के वर्तमान तकनीक में भारी परिवर्तन हो सकते हैं। संभव है कि वाहनों में प्राकृतिक गैस, हाइड्रोजन बिजली आदि के इस्तेमाल पर जोर दिया जाए। गैसोलिन चालित वाहन के उत्पादन बढ़ सकते हैं। ऐसे उपकरणों के प्रचलन के प्रयास होंगे जो कार्बन डाइआक्साइड नहीं छोड़ते हैं, पर्यावरण को कम से कम या बिल्कुल प्रदूषित नहीं करते। इससे नये उद्योग धंधे पनपेंगे या पुराने धंधों के काया कल्प हो सकते हैं। विज्ञान शायद वायु चलित उपकरणों पर अधिक ध्यान देगा।

सौर ऊर्जा के सदुपयोग का सुनहरा क्षितिज विज्ञान को निरन्तर आमंत्रित कर रहा है। सूर्य अपने सौर मंडल का अभिभावक है। जिसका हर समस्या के समाधान में उपयोग किया जा सकता है। सौर ऊर्जा आसानी से हाइड्रोजन प्रदान करता है। वहाँ कार्बन शायद कुछ उपद्रव नहीं कर सकेगा। पर्यावरण को प्रदूषण से मुक्त करने के सारे प्रयास औद्योगिक क्रान्ति के दूसरे अध्याय में योगदान करेंगे। स्थिति यह होगी कि अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण प्रदूषण औद्योगिक क्रान्ति के दूसरे अध्याय का अव्वल कातिब होगा। आज तो यह मानवता के विकास के सभी रास्ते रोककर भयानक दानव की तरह सीना तानकर अट्टाहास कर रहा है। विज्ञान इस दानव को मारने के लिए अस्त्र खोज रहा है।

तत्व-यौगिक-मिश्रण या ठोस-तरल-गैस जैसी तालिकाओं की जगह दो नई तालिकाएँ महत्वपूर्ण मानी जाएँगी- पारितंत्र के शत्रु, पारितंत्र के मित्र। औद्योगिक क्रान्ति के दूसरे अध्याय में उन सभी वस्तुओं से परहेज होगी जो परितंत्र के शत्रु हैं या हो सकते हैं। ऐसी वस्तु उपयोगी है तो उसका विकल्प तलाशने की कोशिश होगी। कई वस्तुएं जिन्हें हम आजतक अनिवार्य-अपिरहार्य मान रहे हैं आने वाले समय में उनका प्रयोग निषेध हो जाएगा। इस तरह अर्थतंत्र पूरी तरह पारितंत्र व पर्यावरण के आदेश का पालन करेगा। वह दिन कितना सुखद होगा जब पारितंत्र प्रदूषण मुक्त होगा, ओजोन परत के टूटने का कोई संकट नहीं रहेगा।

राष्ट्रीय आर्किडेरियम तथा प्रायोगिक उद्यान, येरकाड

अनीस अहमद अंसारी
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, येरकाड (तामिलनाडू)

दक्षिण परिमण्डल, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के अधीनस्थ राष्ट्रीय आर्किडेरिम तथा प्रायोगिक उद्यान, येरकाड (कुल क्षे० फ० 18.6 हेक्टेयर) की स्थापना 1963 में की गई। यह तामिलनाडु प्रदेश के सेलम जनपद के शेवाराय पहाड़ के सन्यासीमलाई आरक्षित वन में 11^0 45' तथा 11^0 55' उत्तर व 78^0 20' पूर्व में स्थित है। यहाँ की जलवायु शीतोष्ण व उष्णकटिबन्धी है। सांद्रता 67-87 %, वार्षिक वर्षा 830 से 1350 मि० मी० तथा तापमान 11-200 से० है।

आर्किड कुल पुष्पीय पौधों में अपनी विशिष्ट बनावट एवं सर्वाधिक संख्या के कारण प्रमुख स्थान रखता है। विश्व में पाई जाने वाली 2500 आर्किड की जातियों में से लगभग 1250 जातियाँ भारत के उत्तर-पूर्व हिमालय तथा प्रायद्वीप भारत के पूर्वी व पश्चिमी घाटों में पाई जाती है। पेड़ों पर पाई जाने वाली आर्किड की जातियों को सामूहिक रूप से नर्सरी, गमले, टोकरी आदि में सर्वाधिक संख्या में एक साथ उगाया जाता है तथा इन की व्याप्ति की जाती है। यह प्रणाली यहाँ की विशेष प्राप्ति व उपलब्धि रही है जिससे आर्किडों की आधिकाधिक संख्या में प्रवेशन व व्याप्ति संभव हो पाई है।

इस उद्यान में प्रायद्वीप भारत में पाए जाने वाले लेडीज-स्लीपर आर्कीड (पेफियोपेडिलम डरूरिपाई) का एक पौधा पाँच वर्षों के प्रवेशन के पश्चात भी पुष्पित नहीं हो पाया है। परन्तु अन्य रोचक, आकर्षक एवं दुर्लभ आर्किड की अनेक जातियाँ जैसे पेफियोपेडिलम, डेन्ड्रोबियम, एराईडिस, वैन्डा, स्पैथोग्लाटिस, सिम्बिडियम, सीलोगाइन, बल्बोफिलम, फेयस आदि सुचारू रूप से फल फूल रही हैं। पेफियोपेडिलम चार जातियों पर पुष्प दो माह से अधिक समय तक खिले हुए देखे जा सकते हैं।

देश तथा विदेश से आर्किडों के अतिरिक्त अन्य 20 दुर्लभ संकट ग्रस्त जातियों के पौधों का प्रवेशन व व्याप्ति का अध्ययन इस उद्यान में हो रहा है। इन में मुख्य रूप से बेन्टिंकिया कोनडापाना (नारियल कुल), वरनोनिया शेवारोयेनन्सिस (सूरज-मुखी कुल), नेपेन्थिस खासियाना (मांसाहारी पौधा), एनिमिया टोमेन्टोसा (फर्न) आदि हैं। हाल ही में इस उद्यान में जीव कोश जात उत्पत्ति प्रयोगशाला की स्थापना की गई है जिस में विभिन्न प्रयोग आर्किड व अन्य कुल के पौधों पर किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त जंगली पौधों के सुन्दर फूल, पत्तियों की उपयोगिता पर भी अध्ययन हो रहा है। दुर्लभ एवं संकटग्रस्त आर्किड के प्रवेशन वृद्धि एवं संरक्षण के साथ-2 अन्य कुलों के पौधों के अध्ययन में इस इकाई का प्रमुख स्थान है।

यहाँ विरल एवं संकटग्रस्त पौधों पर निरन्तर शोध कार्य चल रहे हैं।

भारतीय वनस्पति उद्यान में वृक्षारोपण उत्सव एवं प्रधान अतिथि

रथीन कुमार चक्रवर्ती एवं हरी शंकर पाण्डेय
भारतीय वनस्पति उद्यान, हावड़ा – 711103

प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता पादप प्रधान रही है जिसके कारण आज तक हिन्दू धर्मावलम्बी पौधों में अलग-अलग देवताओं का वास स्थान मानकर वृक्षारोपण एवं पूजा करते आ रहे हैं। विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद में स्तुति का विधान वृक्षों से किया गया है। भगवान बुद्व, कवि कालिदास आदि ने भी वृक्षों की महत्ता पर प्रकाश डाला था। सम्राट अशोक ने तो वृक्षारोपण के निरीक्षण के लिए एक उच्चस्तरीय समिति भी बनाई थी।

इसके महत्व को देखते हुए भारत के अन्य संस्थानों की तरह हावड़ा के भारतीय वनस्पति उद्यान में भी वनमहोत्सव का त्योहार प्रत्येक वर्ष मनाया जाता है। विशेष परिस्थियों को छोड़ कर यह त्यौहार उद्यान के वर्षगांठ अर्थात् 6 जुलाई को मनाया जाता है। इस अवसर पर कोई न कोई गणमान्य व्यक्ति प्रधान अतिथि के रूप में उपस्थित होता है जो इस समारोह के उपलक्ष्य में एक विशेष पौध का रोपण करता है। इसके अलावा अन्य अवसरों जैसे शिलान्यास तथा उद्घाटन समारोह में भी प्रधान अतिथियों द्वारा वृक्षारोपण किया गया है। प्रस्तुत लेख में उपरोक्त अवसरों की स्मृति में लगाये गये पौधों एवं गणमान्य व्यक्तियों का उल्लेख किया गया है। यह विवरण मात्र सन् 1964 से ही प्रस्तुत किया गया है क्योंकि इस उद्यान का हस्तानान्तरण 1 जनवरी 1963 को केन्द्रीय सरकार के अन्तर्गत भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण को हुआ था।

6 जुलाई 1964 : भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के निदेशक फादर (डा०) एच० सान्तापाऊ ने भारतीय वनस्पति उद्यान के 177 वीं वर्षगांठ तथा भारत सरकार के 15वें वन महोत्सव समारोह के अवसर पर मुराया पैनीकुलाटा [Murraya paniculata (L.) Jack] के नवोद्भिद का रोपण किया। अपने आप में आकर्षक सुगन्धित फूल वाला भारतीय मूल का यह पौध्कामिनी नाम से जाना जाता है। यह सुशोभित चिनी-चमकीली पत्तियों से लदा रहता है। इसका संवर्धन बाड़ या सजीव आकृतियों के लिए किया जाता है। छाता की आकृति वाला यह झाड़ीनुमा वृक्ष उद्यान के भाग 6 में कियास्क भवन के समीप सुन्दरता के साथ उग रहा है।

24 जुलाई 1965 : उद्यान के 178वीं वर्षगांठ एवं 16 वें वन महोत्सव से शुभावसर पर भी मुख्य अतिथि, वृक्ष एवं स्थान सभी यथापूर्व ही था। भारतीय वनस्पति उद्यान के विश्रामगृह का उद्घाटन एवं केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय के शिलान्यास समारोह के उपलक्ष्य में भारत सरकार के तत्कालीन शिक्षामंत्री श्री एम० सी० छागला के कर कमलों द्वारा एपोसाइनेसी कुल के होलेरहेना फ्लोरीवन्डा [Holarrhena foribunda (Gedon) Du & Schirz.] नामक वृक्ष के नवोद्भिद का रोपण केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय के मुख्य द्वार के समक्ष भाग 21 में किया गया। यह नवोद्भिद इवादान विश्वविद्यालय, नाइजीरिया के वनस्पति उद्यान से प्राप्त बीज से 1964 में तैयार किया गया था। वृक्ष सन् 1977 से लगातार पुष्पित हो रहा है परन्तु फल कभी-कभी आता है। इसके छाल का उपयोग दवाई, तथा लैटेक्स का उपयोग रबर बनाने में किया जाता है।

6 जुलाई 1966 : उद्यान के 179वें वर्षगांठ एवं भारत सरकार के 17वें वन महोत्सव के अवसर पर 1964 की सभी बातें यथावत् थी।

6 जुलाई 1967 : भारत सरकार के तत्कालीन विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी मंत्री श्री भागवत झा आजाद द्वारा उद्यान के 180 वें वर्षगांठ तथा 18वें वन महोत्सव के मौके पर कुप्रेस्सेसी कुल के कुप्रेस्सस सेमीपरबिरेन्स [Cupressus semipervirens Linn.] नामक पौध का रोपण किया जो इस उद्यान के लिए एक नया प्रवेशन था। ''इटालियन साइप्रस'' के प्रचलित नाम वाला यह पौधा दक्षिण यूरोप व पश्चिमी एशियाई मूल का था जो अनुकूल वातावरण के अभाव में अल्पायु में ही मर गया।

6 जुलाई 1968 : उद्यान के 181 वें वर्षगांठ तथा भारत के 19वें वन महोत्सव समारोह में भी 6 जुलाई 1964 की सभी बातें यथावत् थीं।

6 जुलाई 1969 : पश्चिम बंग सरकार के वनमंत्री श्री भवतोष सोरेन ने उद्यान के 182वें वार्षिकी एवं भारत सरकार के 20वें वन महोत्सव समारोह के अवसर पर जूट शोध संस्थान के निदेशक डा० वी० सी० कुन्डू द्वारा प्रदत्त कलाइटोरिया रेसीमोसा [Clitoria racemosa G. Dom] के एक वर्ष पुराने नवोद्भिद का रोपण किया। डा० कुन्डू ने इसे इसके मूल स्थान ब्राजील से बीज लाकर खुद पौध उगाया था। उद्यान के भाग 4 में लगा यह विभूषक छायादार वृक्ष सन् 1981 से लगातार फूल एवं कभी-कभी फल दे रहा है। जून से अगस्त तक फूल देने वाला यह पौधं चौड़ी सड़कों के किनारे छायादार वृक्ष के रूप में लगाने के लिए उपयुक्त होता है।

6 जुलाई 1970 : कलकत्ता के बोस ग्वेषणा संस्थान के निदेशक एवं पौध शरीर-विज्ञान के वनस्पतिशास्त्री प्रो- एस० एम० सरकार द्वारा उद्यान के 183वें वर्षगांठ तथा 21वें वन महोत्सव के शुभअवसर पर अम्हेर्स्टिया [Amherstia noblis Wall] नामक पौध का रोपण उद्यान के भाग 8 में किया गया। बर्मा मूल के सुन्दर फूल वाले इस वृक्ष को 'फ्लावर आफ दी हेवेन' अर्थात् 'स्वर्ग का फूल' कहा जाता है। भारतीय भाषाओं में इसका कोई नाम न होने के कारण तथा फूलों की सुन्दरता व आकृति के आधार पर डा० आर० के० चक्रवर्ती तथा डा० एस० के० जैन ने अपनी पुस्तक ब्युटीफुल ट्रीज आफ कलकत्ता, 1984 में इसका नाम 'उर्वशी' रखा जो अब धीरे-2 प्रचलित होने लगा है।

6 जुलाई 1971 : पश्चिम बंगाल के तत्कालीन राज्यपाल श्री एस० एस० धवन ने उद्यान के 184वें वर्षगांठ एवं 22वें वन महोत्सव समारोह के उपलक्ष्य में प्रोटीएसी कुल के ग्रेवीलिया रोब्रस्टा [Greveillea robusta A. Cunn.] नामक वृक्ष के नवोद्भिद का रोपण किया जो उद्यान के भाग 25 में स्थित केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय के दक्षिणी-पश्चिमी किनारे पर अपनी ऊँचाई के साथ सुशोभित हो रहा है। 'आस्ट्रेलियन सिल्क' वृक्ष विभूषक वागवानी के लिए उपयुक्त है जिसे ब्युटीफूल ट्रीज आफ कलकत्ता (चक्रवर्ती तथा जैन, 1984) में 'रूपसी' नाम दिया गया है। पत्तियों का निचला भाग रजत के रंग का होने के कारण इसे 'सिल्वर ओक' भी कहते हैं। इसके छोटे-2 पौधे घरों में भीतरी सजावट के लिए अतिउत्तम होते हैं।

6 जुलाई 1972 : उद्यान के 185वें वार्षिकी तथा 23 वें वन महोत्सव के अवसर पर पश्चिम बंग सरकार

के तत्कालीन वन, पशुपालन एवं आबकारी विभागके मंत्री श्री सीतारीम महतो ने आस्ट्रेलियाई मूल एवं मिरटेसी कुल के कैलिस्टीमान लाइनिएरीस [Callistemon ,linearis DC.] के नवोद्भिद का रोपण किया। उद्यान के भाग 6 में स्थित कियास्क भवन के ठीक सामने लगा नवोद्भिद एक सुन्दर वृक्ष के रूप में बिना पुष्पित हुए बढ़ रहा है।

6 जुलाई 1973 : गत वर्ष की भांति उद्यान के 186वें वर्षगांठ एवं 24वें वन महोत्सव समारोह के अवसर पर भी पश्चिम बंग सरकार के तत्कालीन वन, पशुपालन एवं आबकारी विभाग के मंत्री श्री सीताराम महतो ही प्रधान अतिथि थे। इस अवसर पर उन्होंने भारतीय मूल वाले एवं एनोनेसी कुल के वृक्ष पालीएलथिया लान्गीफोलिया वेराइटी पेन्डुला [Polyalthia longifokia (Sonnerat) Thwaites vor. pendula] के नवोद्भिद का रोपण किया। यह नवोद्भिद इस उद्यान में उग रहे वृक्षों से प्राप्त बीज द्वारा लगाया गया। वृक्ष ठीक केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय के मुख्य द्वार के सामने है जो कतार में लगे इसी प्रकार के वृक्षों में से एक है। विभूषक बागवानी तथा नयनगोचर प्रदेश (लैन्डस्केप) की दृष्टि से यह वृक्ष अतिउत्तम समझा जाता है जिसकी शाखायें हाथ नीचे किए हुए मानव की तरह नीचे की ओर झुकी होती है।

6 जुलाई 1974 : पश्चिम बंगाल के राज्यपाल श्री ए० एल० डायस ने उद्यान के 187वें वर्षगांठ एवं भारत के 25वें वन महोत्सव समारोह के अवसर पर वर्बीनेसी कुल के टेकटोना ग्रेन्डीस [Tectona grandis Linn .f.] नामक वृक्ष के नवोद्भिद का रोपण किया। इमारती लकड़ी के लिए प्रसिद्ध यह वृक्ष उद्यान के भाग 6 में कियास्क भवन के समक्ष लगा हुआ है और 1991 से फूल एवं फल देना आरम्भ किया है।

7 जुलाई 1975 : कलकत्ता विश्वविद्यालय की प्रसिद्ध वैज्ञानिक डा० (श्रीमती) असीमा चटर्जी ने उद्यान के 188वें वर्षगांठ एवं भारत के 26वें वन महोत्सव के शुभअवसर पर एगेथिस रोबस्टा [Agathis robusta Hook] नामक वृक्ष के नवोद्भिद को उद्यान के भाग 8 में लगाया। एराउकेरीएसी कुल एवं आस्ट्रेलिया मूल का यह सदाबहार वृक्ष साधारणतया "दी काउरी पाइन" के नाम से जाना जाता है। 40 मी० की ऊँचाई तक बढ़ने वाला यह वृक्ष सड़कों के किनारे "एवन्यू ट्री" के रूप में लगाने के किए अतिउत्तम होता है एवं एक प्रकार का रेजीन भी प्रदान करता है।

इसी अवसर पर भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभागके संयुक्त सचिव तथा समारोह के अध्यक्ष डा० एस० के० सुब्रामनियम ने भी एराउकेरिया कालुमनेरिस [Araucaria columnaris Hook] नामक वृक्ष के नवोद्भिद का रोपण किया। यह पौधा भी धीरे-धीरे वृक्ष में परिणत होते हुए उद्यान के भाग 8 की शोभा बढ़ा रहा है।

5 जुलाई 1976 : भारतीय वनस्पति उद्यान के 189वें वर्षगांठ एवं भारत के 27 वें वन महोत्सव समारोह के उपलक्ष्य में भारत सरकार के योजना राज्य मंत्री श्री शंकर घोष द्वारा स्टेनोकार्पस सीनुएटस [Atenocarpus sinuatus Endl.] नामक वृक्ष के नवोद्भिद का नया प्रवेशन उद्यान के भाग 9 में हुआ जो सम्भवतः अनुकूल वातावरण के अभाव में अल्पायु में ही मर गया।

7 जुलाई 1977 : कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति डा० एस० के० मुखर्जी उद्यान के 190वें वार्षिकोत्सव तथा 28वें वन महोत्सव समारोह के प्रधान अतिथि थे। इस अवसर इनके द्वारा साइजिजियम जाम्बोस [Syzygium jambos] एवं साइजिजियम एक्येम [Syzyagium aqueum] के संयोग से तैयार यूजिनिया हाइब्रिडा [Eugenia hybrida Hort.] नामक पौध का रोपण किया गया। यह पौध एग्रीहार्टिकलचरल सोसाइटी, कलकत्ता से लाया गया था। छोटे आकार का यह वृक्ष उद्यान के भाग 7 में मन्थर गति से बढ़ते हुए सन् 1989 से फल एवं फूल दे रहा है। फल खाने योग्य होते हैं एवं फलों का निचला भाग लाल रंग का होने के कारण देखने में सुन्दर लगता है।

6 जुलाई 1978 : पश्चिम बंगाल के राज्यपाल श्री टी० एन० सिंह उद्यान के 191 वें वर्षगांठ तथा 29वें वन महोत्सव समारोह के अवसर पर साइकेडेसी कुल के साइकस पेक्टीनेटा [Cycas pectinata Griff.] नामक पौध को लगाया। यह पौध उद्यान के भाग 4 में स्थित पाइनेटम में अच्छी तरह से बढ़ते हुए फल भी दे रहा है परन्तु उद्यान में इस जाति का कोई पुरूष वृक्ष न होने के कारण निषेचन क्रिया के अभाव में तैयार ये फल नवोद्भिद उत्पन्न करने में असमर्थ होते हैं। अतः नये पौध तैयार करने के लिए पुरूष वृक्ष का प्रवेशन आति आवश्यक है। यह पौध अपने प्राकृतिक स्थान में भी संकटग्रस्त अवस्था में पहुँच गया है अतः इसका संरक्षण जरूरी है।

उपरोक्त अवसर पर समारोह के अध्यक्ष एवं भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के निदेशक डा० एस० के० जैन ने भी बाम्बेकेसी कुल के कोरिसिया स्पेसीओसा [Chorisia speciosa St. Hill.] नामक पौध का रोपण किया जिसे इसी वर्ष अक्टूबर मास में आये बाढ़ के कारण बचाया न जा सका।

2 जुलाई 1979 : भारत सरकार के रक्षा, विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी, परमाणु ऊर्जा, इलेक्ट्रानिक एवं अन्तरिक्ष विभाग के मंत्री प्रोफेसर शेर सिंह ने उद्यान के 192 वें वर्षगांठ एवं भारत के 30वें वन महोत्सव समारोह के अवसर पर लौंग - साइजिजियम एरोमेटिकम [Syzygium aromaticum (Linn.) Merr. et. Perr.] नामक वृक्ष के नवोद्भिद का रोपण किया। इस वृक्ष का मूल स्थान मल्युकस द्वीप है। विश्व के अनेक उष्णकटिबन्धीय भागों के अलावा भारत के कुछ राज्यों (केरल, तमिलनाडु एवं अन्दमान) में भी करीब 2000 पेड़ों का सम्वर्धन हो रहा है परन्तु उद्यान में इसके प्रवेशन का प्रयास भी एक वर्ष के बाद ही खत्म हो गया। दो सौ वर्ष पुराने इस उद्यान में आज भी इसका स्थान रिक्त है।

4 जुलाई 1980 : बोस संस्थान, कलकत्ता के निदेशक प्रोफेसर एस० सी० भट्टाचार्य ने उद्यान के 193वें वार्षिकी तथा 31वें वन महोत्सव समारोह के उपलक्ष्य में गारसिनिया काम्बोजिया [Garcinia Combogia Desr.] नामक वृक्ष के करीब तीन वर्ष पुराने पौध का रोपण किया जिसे उद्यान के कर्मचारियों ने दक्षिण भारत अभियान के दौरान पश्चिमी घाट से 1978 में एकत्र किया था। इसके फल खाने योग्य होते हैं एवं बीजों से 31% तेल निकलता है। यह पौध उद्यान के भाग 20 में धीरे-धीरे वृक्ष का रूप ले रहा है परन्तु अभी तक पुष्पि त नहीं हुआ है।

7 जुलाई 1981 : भारत सरकार के पर्यावरण विभाग के तत्कालीन सचिव एवं प्रसिद्ध समुद्रविज्ञानी डा०

एस० जेड० कासीम ने उद्यान के 194वें वर्षगांठ तथा भारत के 32वें वन महोत्सव समारोह के अवसर पर ब्राजील मूल वाले यूफोर्बिएसी कुल के जोनेसिया प्रिन्सेप्स [Joannesia princeps Vell.] के नवोद्भिद का रोपण किया जो वन शोध संस्थान, देहरादून से लाया गया था। वृद्धि के बावजूद यह अभी पुष्पित नहीं हुआ है। इस जाति के वृक्ष विशाल परन्तु विभूषक होते हैं जो इमारती लकड़ी, तेल व औषधि प्रदान करते हैं।

6 जुलाई 1982 : पश्चिम बंगाल के तत्कालीन राज्यपाल श्री बी० डी० पान्डेय ने 195वें वार्षिकी तथा भारत के 33वें वन महोत्सव पर 'दी हिमालयन साइप्रस ट्री' - कुप्रेस्सस टोरूलोसा [Cupressus torulosa Don] के नवोद्भिद का रोपण किया जो तमिलनाडु राज्य के तमिझाधम - ऊटी से प्राप्त बीज द्वारा तैयार किया गया था। पश्चिमी हिमालय के 2000-2500 मी० की ऊँचाई वाले क्षेत्र में पाये जाने वाले पिरामिड आकार के इस लम्बे वृक्ष की लकड़ी अधिक टिकाउपन के कारण इमारती कार्यों में प्रयुक्त होती है। ताजा पत्तियों के वाष्प-निर्जलीकरण से तेल प्राप्त होता है। सम्भवतः तापमान एवं वातावरण के विभिन्नता के कारण इस नवोद्भिद के नये प्रवेशन का प्रयास सफल नहीं हो सका।

इसी अवसर पर माननीय राज्यपाल की सहधर्मिणी श्रमती विमला पाण्डेय ने भी पोडोकार्पुस ग्रेसिलियोर [Podocarpus gracilior Pilger] नामक वृक्ष के नवोद्भिद का रोपण किया। यह मध्य अफ्रीका मूल का वृक्ष है जो साधारणतया 'अफ्रीकान फर्न पाइन' के नाम से जाना जाता है। मूल्यवान लकड़ी एवं करीब 20 मी० की ऊँचाई तक बढ़ने वाला यह वृक्ष झुकी हुई डालियों तथा संकरी भाले के आकार की गहरे हरे रंग की पत्तियों सहित अति विभूषक लगता है। शोभाकर बागवानी के लिए उपयुक्त यह नवोद्भिद धीरे-2 तरूण अवस्था की ओर अग्रसर हो रहा है।

6 जुलाई 1983 : कलकत्ता उच्च न्यायालय की न्यायधीश श्रीमती पद्मा खस्तगीर ने उद्यान के 196वें वर्षगांठ एवं भारत के 34वें वन महोत्सव समारोह के उपलक्ष्य में जैक्यूनिया बरटेरी [jacquinia berterri Spreng.] के करीब पाँच वर्ष पुराने पौध का रोपण किया जो तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय के वनस्पति उद्यान से प्राप्त बीज से तैयार किया गया था। 'ब्रासलेट उड ट्री' नाम से प्रसिद्ध थियोफ्रास्टेसी कुल का यह पौध क्यूबा, जमैका तथा उसके आस-पास के क्षेत्रों में मूल रूप से पाया जाता है। सघन पत्तियों वाला आकर्षक, सदाबहार एवं मध्यम ऊँचाई (3.5 - 7 मी0) वाला यह वृक्ष शोभाकर बागवानी के लिए उपयुक्त होता है। उद्यान के भाग 6 में स्थित कियास्क भवन के सामने लगा यह वृक्ष 13 वर्षों में मात्र एक मीटर बढ़ पाया है।

उक्त अवसर पर समारोह के अध्यक्ष एवं भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के निदेशक डा० एस० के० जैन ने भी बाउहिनिया रेटुसा [Bauhinia retusa Bucj. Ham. ex DC.] नामक पौध का रोपण किया जो अधिक दिनों तक जीवित नहीं रह सका। इस जाति के वृक्ष मूल रूप से उत्तरी-पश्चिमी हिमालय में पाये जाते है जो गोंद प्रदान करते हैं तथा देखने में विभूषक लगते हैं।

30 जुलाई 1984 : उद्यान के 197वें वर्षगांठ एवं भारत के 35वें वन महोत्सव समारोह के अवसर पर वनस्पति शास्त्र कलकत्ता विश्वविद्यालय में कार्यरत अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति की कोशिकाविद् पद्मभूषण डा०(श्रीमती) अर्चना शर्मा ने टैक्सोडियम म्युक्रोनेटम [Taxodium

mucronatum Tenore] नामक वृक्ष के दो वर्ष पुराने नवोद्भिद का रोपण किया जो वन शोध संस्थान देहरादून से लाया गया था। पाइनेसी कुल का यह वृक्ष मैक्सिको का मूल निवासी है एवं साधारणतया ''मान्टेजुमा साइप्रस'' नाम से जाना जाता है। सुशोभित पत्तियों के लिए विख्यात इस वृक्ष में श्वास जडें होती हैं जो मुख्य तने से निकलकर कोणयुक्त या समानान्तर रूप में दलदल से भरे हुए आधार भाग पर स्थिर हो जाती है प्रधान अतिथि द्वारा लगाये गये नवोद्भिद को उद्यान के भाग 20 में उपयुक्त स्थान समझ कर स्थानान्तरण किया गया जहाँ भली-भांति उगते हुए करीब 10 मी० की ऊंचाई तक पहुँच गया है।

इस अवसर पर समारोह के अध्यक्ष एवं भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के निदेशक डा० एम० पी० नायर ने भी अन्दमान मूल एवं डिप्टोरोकार्पेसी कुल के डीप्टेरोकार्पस एलेटस [Dipterocarpus alatus Raxub.] नामक पौध के नवोद्भिद का रोपण उद्यान के भाग 8 में किया जो इस उद्यान में ही तैयार किया गया था। यह लम्बा, सदाबहार वृक्ष अच्छे किस्म की लकड़ी एवं 'ओलियो-रेजिन' प्रदान करता है।

8 अगस्त 1985 : भारत सरकार के पर्यावरण विभाग में सचिव श्री जे० ए० कल्याण कृष्णनन ने उद्यान के 198 वें वर्षगांठ तथा भारत के 36वें वन महोत्सव समारोह के अवसर पर 'दी काउरी पाइन' एगेथिस रोबस्टा [agathis robusta Hook] नामक वृक्ष के नवोद्भिद का उद्यान के भाग 8 में रोपण किया जो एक पूर्ण वृक्ष के रूप में विकसित हो रहा है।

इस अवसर पर निदेशक डा० एम० पी० नायर ने ''अमेरिकन अर्वोमीटेइ'' थूजा एक्सीडेन्टेलिस [Thuja accidentalis Linn.] नामक पौध के नवोद्भिद का उद्यान के भाग 8 में स्थित पाइनेटम में रोपण किया जो अच्छी तरह से उग रहा है। इस जाति के वृक्ष करीब 20 मी० ऊँचे होते हैं जिन्हें उद्यानों में सुन्दर पत्तियों के लिए लगाया जाता है।

8 अगस्त 1986 : कलकत्ता विश्वविद्यालय में वनस्पति विज्ञान के घोष प्रोफेसर, इन्डियन नेशनल साइन्स एकेडमी के स्वर्ण जयन्ती प्रोफेसर, अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के कोशिकाविद्, पद्म-भूषण डा० ए० के० शर्मा ने उद्यान के 199वें वर्षगांठ तथा भारत के 37वें वन महोत्सव समारोह के उलपक्ष्य में एवेन्यू ट्री के लिए विख्यात आस्ट्रेलियाई मूल के 'दी काउरी पाइन' अगेथिस रोबस्टा [agathis robusta Hook] नामक वृक्ष के नवोद्भिद का रोपण किया जो उद्यान के भाग 8 में तेजी से ऊँचाई की तरफ बढ़ रहा है।

उपरोक्त अवसर पर निदेशक डा० एम० पी० नायर ने भी ''अफ्रीकन फर्न पाइन'' पोडोकार्पस ग्रेसिलियोर [Podocarpus gracilior Pilger] नामक वृक्ष के नवोद्भिद का रोपण किया जो उद्यान के भाग 8 में भली-भांति बढ़ रहा है।

31 अक्टूबर 1986 : भारत सरकार के तत्कालीन वाणिज्य राज्यमंत्री श्री प्रिय रंजन दासमुन्शी ने श्रीमता इन्दिरा गाँधी के स्मृति में मनाये जा रहे ''राष्ट्रीय एकता'' के अवसर पर उष्ण कटिबंधीय अमेरिका तथा वेस्टेन्डीज मूल के स्वीटेनिया महागोनी [Swietenia mohagoni (L.) Jacq.] के दो वर्ष पुराने पौध का भाग 17 में रोपण किया। रोपण के पूर्व मिट्टी में श्रीमती गाँधी की स्मृति में उनका अस्थि अंश मिलाया गया। राष्ट्रीय एकता का प्रतीक यह पौध मन्थर गति से बढ़ रहा है। इस जाति के वृक्ष 'एवेन्यू ट्री' के रूप

में लगाने के लिए उपयुक्त होते हैं एवं मूल्यवान लकड़ी प्रदान करते हैं।

6 जुलाई 1987 : वनस्पति विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डा० एच० वाइ० मोहनराम ने भारत के 38वें वन महोत्सव समारोह के अवसर पर एराउकेरिएसी कुल के एराऊकेरिया कनिनधामी[Araucaria cunringhamii Sweet] नामक चार वर्ष पुराने पौध का रोपण उद्यान के भाग 8 में स्थित पाइनेटम में किया जो अच्छी तरह से बढ़ रहा है। सुन्दर पत्तियों वाले ये वृक्ष 60-65 मी० ऊँचे होते हैं जो मूल्यवान लकड़ी रेजिन प्रदान करते हैं। ये वृक्ष नयनगोचर प्रदेश (लैन्डस्केप) के लिए भी उत्तम होते हैं। इस अवसर पर हावड़ा के मेयर श्री अलोक दूत दास ने एगेथिस रोबस्टा [Agathis robusta Hook.] के तीन वर्ष पुराने पौध का एवं निदेशक एम० पी० नायर ने एराउकेरिया बिडविली[Araucaria bidwillie Hook.] के चार साल पुनारे पौधे, जिसे अंग्रेजी में "बुनिया-बुनिया" कहते हैं, का उद्यान के भाग 8 में रोपण किये। दोनों वृक्ष अपनी स्वाभाविक वृद्धि की ओर अग्रसर है।

6 सितम्बर 1988 : विश्व प्रसिद्ध भारतीय वनस्पति उद्यान की द्विशतवार्षिकी समापन समारोह के उपलक्ष्य में यादवपुर विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति डा० मनीन्द्र मोहन चक्रवर्ती ने एगेथिस रोबस्टा [Agathis robusta Hook] के दो वर्षीय पौध का उद्यान के भाग 16 में रोपण किया जो वन शोध संस्थान देरहादून से लाया गया था।

12 सितमबर 1989 : कलकत्ता पोर्ट ट्रस्ट के अध्यक्ष डा० ए० सी० राय ने उद्यान के 202वें वर्षगांठ एवं भारत के 40वें वन महोत्सव समारोह के अवसर पर उत्तरपूर्वी भारतीय मूल का एवं चेसा वन शोध संस्थान, अरूणाचल प्रदेश से प्राप्त साइजिजियम कुर्जी [Syzygium Kurzii (Duthie) Balakr.] नामक दो वर्षीय पौध का रोपण किया। इस अवसर पर उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रेबा राय ने भी "मलाया एपिल" साइजिजियम मालासेन्सीस [Syzygium malaccensis (L.) Merrill & Perry] के नवोद्भिद का रोपण किया। ये दोनों वृक्ष उद्यान के भाग 6 में सामान्य रूप से बढ़ रहे हैं।

21 जनवरी 1992 : मानव संसाधन राज्यमंत्री, भारत सरकार, सुश्री ममता बनर्जी ने बी० एस० आई० एन० जी० एस० ए० के तीसरे सम्मेलन के उद्घाटन समारोह के उपलक्ष्य में "माउन्टेन रोज" ब्राउनिया हाइब्रीडा [Brownea hybrida Hort. ex Back.] के तीन वर्ष पुराने पौध का रोपण किया जो उद्यान के भाग 6 में स्थित कियास्क भवन के सामने स्वाभाविक रूप में मन्थर गति से बढ़ रहा है। सीसवपीनिएसी कुल का यह सदाबहार वृक्ष छोटे आकार का होता है जिसे सु न्दर फूलों के लिए उगाया जाता है। फूल गुच्छों में आते हैं जो रात में खिलते एवं दिन में बन्द हो जाते हैं अतः ब्युटीफुल ट्रीज आफ कलकत्ता (चक्रवर्ती एवं जैन, 1984) में "सुसी" नाम दिया गया है।

26 मई 1992 : बी० एस० आई० इ० ए० के रजत जयन्ती उद्घाटन समारोह पर पश्चिम बंगाल के भूमि एवं भूमि कर मंत्री श्री विनय कृष्ण चौधरी ने एराऊकेरिया कनिनघामी [Araucaria cunninghami Sweet] के 2 वर्षीय पौध का

रोपण किया जो शोभाकर बागवानी के लिए उपयुक्त होता है।

इसी अवसर पं० बंग कर्मचारी समन्वय समिति के सचिव श्री बारोदा भट्टाचार्य ने तीन वर्षीय पौध का रोपण किया।

इसके अलावा भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के निदेशक डा० बी० डी० शर्मा ने भी ''दी अफ्रीकन फर्न पाइन'' पोडोकार्पुस ग्रेसिलियोर [Podocarpus gracilior Pilger] के चार वर्षीय पौध का रोपण किया। उपरोक्त तीनों पौधे उद्यान के भाग 8 में स्थित पाइनेटम-II में स्वाभाविक रूप से बढ़ रहे हैं। इन पौधों का विशेष विवरण क्रमशः 6 जुलाई 1987, 7 जुलाई 1983 की तरह है।

24 अगस्त 1992 : कलकत्ता स्थित जापान के कान्सल जनरल मि० मोटोजोना मासाओसी ने ''उद्यान भ्रमण यादगार'' हेतु ब्राउनिया हाइब्रिडा [Brownea hybrida Hort. ex Back.] के नवोद्भिद का उद्यान के भाग 6 में रोपण किया जो कियास्क भवन के सामने अच्छी तरह से उग रहा है।

पौधों के प्रति जन चेतना हेतु सन् 1950 में राष्ट्रीय त्यौहार के रूप में ''वन महोत्सव'' को मान्यता मिली। त्यौहार शब्द जोड़ने का अभिप्राय अन्य त्यौहारों की तरह इसे भी हर्ष एवं उल्लास के साथ मनाना है। जुलाई मास में वृक्षारोपण मनाने का मूल कारण इस मास में लगाये गये पौधों को अनुकूल वातावरण मिलना है।

भारत सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त इस त्यौहार के शुभ अवसर पर हम सभी को पृथ्वी की द्रुतगति से नष्ट हो रही हरियाली को ''संरक्षण, बचाव तथा निदेशन द्वारा'' रक्षा का शपथ लेना चाहिए जो प्रदूषण को कम करने के साथ वायुमण्डल को शुद्ध करती है एवं देश के आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए आवश्यक पादप सम्पदा को बढ़ाती है।

पश्चिमी हिमालय के अल्प ज्ञात खाद्य उपयोगी पर्णांग

डा० आर० आर० राव एवं उषा चौधरी
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून

आज के बदले परिवेश में बढ़ती जनसंख्या की भोजन पूर्ति के वैकल्पिक साधन ढूंढे जा रहे हैं, जिसमें अपारम्परिक स्त्रोतों से भोजन प्राप्त करना भी शामिल है। अब हम ऐसे पौधों को खाने योग्य बना सकते हैं, जो अभी तक बेकार समझे जाते थे। इन पौधों में अपुष्पी पौधे भी शामिल है। अपुष्पी पौधों में प्रमुख पर्णांग का खाद्य रूप में उपयोग कोई नया नहीं है। विदेशों में प्राचीन समय से ही लोग न केवल भोजन के रूप में इनका प्रयोग करते रहे हैं, अपितु दवाइयों में भी इनका उपयोग होता रहा है। कुछ देशों में इनकी खेती भी शुरू हो गई है। किन्तु हमारे देश में इनकी 1000 से अधिक जातियाँ होते हुए भी इनकी उपयोगिता का ज्ञान क्षेत्र सीमित रह गया है, जिसका प्रमुख कारण उत्पादन एवं उपयोगिता के समुचित अध्ययन का अभाव होना है। पर्णांग को समुद्री किनारों पश्चिम के गर्म रेगिस्तानों से लेकर उत्तर में ठंडे रेगिस्तान व नमी वाले उष्ण कटिबंधीय स्थानों तथा ऊँचे पहाड़ों सहित विभिन्न वातावरणों में उगते हुए बखूबी देखा जा सकता है।

इस लेख में कुछ ऐसे पर्णांगों के बारे में जानकारी देने का प्रयास किया गया है जिन्हें भोजन समस्या के निदान में सहायक बनाया जा सकता है।

1. डिप्लेजियम एस्पेरम (लिंगोरा)

एथिरिएसी कुल का यह पौधा अधिकतर हिमालय दक्षिण भारत, इन्डोनेशिया और जावा में 1200-2400 मीटर तक की ऊँचाई पर पाया जाता है। हिमालय में यह नम एवं छायादार स्थानों में उपलब्ध होता है। इसका प्रचलित नाम लिंगोरा है।

खेतों में यह अपने बड़े आकार (लगभग 2 मी० ऊँचे) की वजह से पहचाने जा सकते हैं। इसका तना (स्टाइप) हरा व गुदेदार होता है। पत्तियाँ द्विपिच्छाकार होती हैं। पुकन्द सीधा व मजबूत होता है। इन पौधों का कोमल भाग जिसमें पत्तियाँ, तना व प्रकन्द शामिल हैं अधिकतर साग बनाकर खाने के काम आता है। इनमें अधिक मात्रा में लवण, विटामिन एवं कार्बोहाड्रेट (मुख्यतः सेल्यूलोज) जैसे उपयोगी तत्व के साथ साथ 4 प्रतिशत एलबिनाइड्र तथा 80 प्रतिशत चर्बी होती है।

2. डाइक्रेनोप्टेरिस लीनियेरिस :

ग्लीचिनिएसी कुल का यह सुन्दर सा पौधा उष्ण और उपोष्ण दोनों जलवायु में पाया जाता है। यह दक्षिण भारत के पहाड़ों पर 1600 मीटर की ऊँचाई पर तथा सिक्किम, कुमाऊँ में सड़क के साथ-साथ अधिकतर 1050-1800 मीटर तक की ऊँचाई पर पाया जाता है। इसका प्रकन्द टेढ़ा-मेढ़ा और लगभग 100 से० मी० तक लम्बा होता है। पौधों के ऊपरी हिस्से पर ताराकृति रोम होते हैं। इनकी पत्तियों की लम्बी डंडियों की छाल फीते-जैसी लम्बी पहिले उतार ली जाती है, जिस से चटाइयों और कुर्सियों के आसन, मछली पकड़ने के जाल, कमरबन्ध पेटिया आदि तैयार करते हैं। लेकिन इसके साथ-साथ यह पौधा टेरिडियम एक्यूनियम नाम के फर्न की तरह मण्ड प्राप्त करने का मुख्य स्त्रोत है। इसकी पत्तियों, प्रकन्दों एवं जड़ों की सब्जी बनाकर खाई जाती है। इसको सलाद के रूप में भी प्रयोग किया जाता है परन्तु अभी इसका प्रयोग खाने में अधिक प्रचलित नहीं हो पाया है।

३. एस्पलेनियम एन्सीफार्मेम :

यह एसिप्लनिएसी कुल का एक बहुत ही छोटा एकपत्रीय फर्न है जो कि पर्वतीय क्षेत्रों में 1200-2700 मीटर तक की ऊँचाई पर पाया जाता है। पर्वतीय क्षेत्रों की जन जातियों में खाद्य के रूप में उपयोग होता है। इसका प्रकन्द छोटा, सीधा और गुच्छों के रूप में होता है तथा पत्तियों के किनारे सीधे होते हैं। परन्तु नीचे का भाग क्रमशः छोटा होता है। पत्तियाँ छूने में खुरदरी होती हैं। सोख्ता कागज में सुखाने पर कागज गाढ़े गुलाबी रंग का हो जाता है, जिससे इसको आसानी से पहचाना जा सकता है।

4. बोटिकियम टरनेटम :

बोट्रीकियेसी कुल से सम्बन्धित यह जाति अधिकतर दक्षिण व उत्तरी भारत, जापान, कोरिया तथा चीन में पायी जाती है। किन्तु उत्तरी पश्चिमी भारत में यह कहीं 3000 मीटर तक की ऊँचाई में घास के मैदानों, खुले जंगलों व हिमाद्र वनों में पायी जाती है। इस पर्णांग का तना काफी छोटा (1 से 4 से० मी०) होता है व बीजाणु पत्तियाँ 5-14 से०मी० लम्बी त्रिकोणाकार व तनों के आधार से लगी हुयी होती हैं, बीजाणुयुक्त प्रवृन्त लगभग 18 इंच लम्बे तथा बीजाणु रहित प्रवृन्त से लम्बे होते हैं। लवण विटामिन आदि आवश्यक तत्व विद्यमान होने के कारण चीन, कोरिया तथा भारत के पर्वतीय क्षेत्रों के निवासी इन्हें खाद्य के रूप में प्रयुक्त करते हैं। यह सम्पूर्ण पौधा ही खाने योग्य है। इसी वंश की एक और जाति बोट्रिकियम वजीनियानम है जो कि उत्तर पश्चिम भारत के पहाड़ी भागों में पायी जाती है। इस फर्न की सब्जी बना कर रोजमर्रा की जरूरतें पूरी की जा सकती हैं।

5. ओफियोग्लोस्सम रेटिकुलेटम :

यह ओफिओग्लोसी कुल का एक बहुत ही छोटा सा फर्न है जो उत्तर प्रदेश, बिहार, आसाम, बंगाल व दक्षिण भारत में 1800 मीटर की ऊँचाई तक मिलती है। इसका प्रकन्द छोटा, तकुआकार या अण्डाकार होता है, जिससे काफी संख्या में जड़ें निकलती हैं। फर्न पत्र 10 से 30 से०मी० तक लम्बे अण्डाकार या भालाकार होते हैं। इस फर्न की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें प्रतिरोधी रतम्भक घावनाश गुण होतेहैं, जिससे इसका उपयोग दवाई के रूप में या सब्जी के तौर पर अन्य वनस्पतियों के साथ मिलाकर किया जाता है। बंगाल में इसे 'एकतीर' तथा असम में 'जीमा' के स्थानीय नाम से जाना जाता है। इस पौधे के खाद्य के रूप में प्रयोग किए जाने की पर्याप्त सम्भावनाएं हैं।

6. टेरिडियम एक्वीलिनम :

(ब्रेकन फर्न) टेरिडिएसी कुल की यह अकेली जाति सम्पूर्ण भारत की पहाड़ियों में 600 से 3600 मीटर तक की ऊँचाई तक व खुले घास के मैदानों में पाई जाती है।

इसका प्रकन्द गुच्छेदार शीघ्र बढ़ने वाला और मजबूत होता है। फर्णांग पत्र लम्बा पुख्ता आधार से द्विपाक्षिक व उपर जाते हुए साधारण हो जाते हैं। ब्रेकेन फर्न शोभाकारी भी है जो पथरीली जगहों पर उगाया जा सकता है।

प्रकन्द के निष्कर्षण से कार्बोहाइड्रेट 51 प्रतिशत, रेशा 20 प्रतिशत, प्रोटीन 9.5 प्रतिशत, शर्करा 67 प्रतिशत टैनिन 6.6 प्रतिशत, वसा 1.2 प्रतिशत तथा कुछ मात्रा में कडुवे ग्लाइकोसाइड्रस पाये जाते हैं। प्राचीन

समय में चीन में इसके प्रकन्द का उपयोग अकाल के दिनों में उबाल कर खाद्य के रूप में किया जाता था, किन्तु अब इनका प्रयोग रोटी बनाकर या चूर्ण बनाकर किया जा रहा है। प्रकन्द से प्राप्त खण्ड प्रायः कडुवा होता है, इसके कड़वेपन को नमक के साथ उबाल कर दूर किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त कोमल पर्णांग लसलसे होते हैं, जिन्हें साग-सब्जी या सूप के रूप में लिया जा सकता है। खाद्य परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि सीमित मात्रा में इसका चारा बनाकर पशुओं को खिलाया जा सकता है जो कि शीघ्र सुपाच्य भी होता है। गुणक प्रणांग-पत्रों का प्रयोग पैकिंग के लिए भी हो रहा है। इससे कागज की लुगदी बनाने के लिए भी प्रयास किया जा रहा है, अध्ययन से पता चला है कि क्षारीय सोडे के साथ पर्णांग पत्रों को उपचरित करने से 24 प्रतिशत तक लुगदी प्राप्त की जा सकती है।

7. इक्वीसिटम आरवेन्स

इक्वीसिटेसी कुल का यह पर्णांग विश्व के अधिकतर भागों में पाया जाता है। यह देखने में तनों के समान होता है, जिसमें सबसे ऊपर शंकु पाया जाता है। वन गुच्छों के रूप में निकलता है। यह भारत में अश्वपुच्छ के नाम से जाना जाता है। चीन व जापान में इसे ''सूगीना'' व सुकूशी के नाम से जाना जाता है तथा वहां इसे उबालकर नमक के साथ साग की तरह खाने के प्रयोग में लाया जाता है। अण्डों के साथ मिलाकर सोयाबीन की चटनी के साथ खाने में भी इसका प्रयोग किया जाता है। लेकिन भारत में इसका प्रचलन अभी तक नहीं हो पाया है। इसके अलावा इसका प्रयोग छुरी कांटों को भी साफ करने व पालिश करने में होता है।

8. हेल्मिन्थेस्टेकिस जैलानिका

यह भी आफियोग्लारूसेसी कुल का पर्णांग है, जो कि अधिकतर नमी वाले छायादार स्थानों पर श्रीलंका, मलेशिया आदि देशों में प्रचुरता से मिलता है। हमारे देश में यह पश्चिमी हिमालय में लगभग 900 मी० से 3000 मी० की ऊँचाई तक पाया जाता है।

इसका प्रकन्द गूदेदार व विसर्पी होता है, तथा इसकी जड़ें भी गूदेदार होती हैं। तना हरा या जामुनी रंग का और गूदेदार होता है। तने के नीचे के भाग से दो अनुपत्र (गोलाकार) निकलते हैं। पौधे की पत्तियाँ मिपाधिक होती है। जीवाणुयुक्त पत्र सीधा होता है। इसका प्रयोग उत्तरी भारत के गाँवों में सब्जी के तौर पर किया जाता है और प्रकन्द का इस्तेमाल दवा के रूप में किया जाता है, जिससे शरीर में स्फूर्ति संचार होता है। मलाया में इसे तनुजोक लांगीत के नाम से जाना जाता है जिसका अर्थ है आसमान की तरफ उठा हुआ।

उपरोक्त पर्णांगों की खाद्य महत्ता को देखते हुए इन्हें और अधिक जनोपयोगी बनाये जाने की आवश्यकता है। इसके लिए जरूरी है कि उपरोक्त जातियों के संरक्षण की ओर ध्यान दिया जाये। उन प्राकृतिक परिस्थितियों का भी अध्ययन करना आवश्यक है जहाँ ये भली प्रकार फल फूल सकें। इसके उत्पादन व औद्योगिक स्तर पर उपयोग के लिए अनुसंधान किये जाने चाहिए, जिससे कि इनमें पाये पाये जाने वाले विभिन्न खाद्य अवयवों का अनुपात बढाया जा सके। आज की बढती हुई खाद्य समस्या के विकल्प खोजने की नितांत आवश्यकता है और पर्णांग इस दिशा में अहम भूमिका निभा सकते हैं।

सिक्किम के वानस्पतिक विविधता की एक झलक

डा० आर० सी० श्रीवास्तव,
सिक्किम हिमालय परिमंडल, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, गान्तोक-737101

सिक्किम शब्द की उत्पत्ति वस्तुतः लिंबु जाति के ''सु-खिम'' अर्थात ''नया घर'' से हुई है। यहाँ के लेपचा समुदाय के लोग इसे ''नी-माई-अल'' की संज्ञा देते हैं। जिसका शाब्दिक अर्थ है ''स्वर्ग से भी सुन्दर''। 27^0 10' - 28^0 5'उत्तरी अक्षांश तथा 88^0 30' - 87^0 पूर्वी देशान्तर की भौगोलिक सीमा के मध्य स्थित हिमालयी प्रदेश सिक्किम, जिसके उत्तर में तिब्बत, पश्चिम में नेपाल, पूर्व में भूटान तथा तिब्बत की चुम्बी घाटी तथा दक्षिण में पश्चिम बंगाल का दार्जिलिंग जनपद है, भारत का 22वां प्रदेश है। यह राज्य स्वयं में सम्पूर्ण भारत का एक नन्हा प्रतिरूप है। इसकी हरी भरी वादियां कल कल बहते श्वेत दुग्ध सदृश्य झरने, गगनचुम्बी हिमाच्छादित चोटियां आदि मिलकर ऐसी अद्भुत छटा प्रस्तुत करती हैं जो वस्तुतः धरती पर स्वर्ग का आभास दिलाते हैं।

यही प्रदेश ऐसा है जहां मात्र 7300 वर्ग कि० मी० क्षेत्र में उष्ण से लेकर हिमाद्रि वनस्पतियों की लगभग 5000 प्रजातियां (फूल वाले पौधों की) पाई जाती है। यहाँ के वन एवं वनस्पति पर नमी से बोझिल प्रबल मानसून हवाओं का विशेष प्रभाव है। इस प्रदेश के विभिन्न स्थलों की समुद्र तल से ऊँचाई लगभग 244 से लेकर 8540 मी० है। विश्व की तीसरी सबसे ऊँची चोटी कंचनजंघा (8603 मी०) यहां के वासियों (प्रमुखतया लेपचा जनजाति) की जन्म-दात्री एवं संरक्षक के रूप में पूजित हैं।

यहाँ की दो प्रमुख नदियाँ तिस्ता एवं रंगित यहाँ के वासियों के जीवन में कंचनजंघा की तरह ही पूजनीय स्थान रखती है। लगभग 4800 मी० ऊँचाई पर स्थित चोलाओ झील से जन्मी तिस्ता के बंगाल के मैदानी भाग में पहुँचने से पहले अनेक उपनदियाँ तथा झरने इसमें अपने को समाहित कर देती हैं इनमें प्रमुख है लापेन चू, लापुंग चू आदि, रंगित पश्चिम जनपद के रामांग हिमखण्ड से निकलती हैं। ये नदियाँ अपने रास्ते में अनेक संकुचित मार्गों तथा घाटियों को जन्म देती हैं। जिनके पृष्ठों एवं ढलान पर ही लोग बसे हैं।

मौसम एवं भौगौलिक अति विविधताओं के फलस्वरूप यह प्रदेश अतुलनीय वनस्पति संपदा का स्वामी है। सिक्किम में औसत वार्षिक वर्षा लगभग 2337 से० मी० होती है तथा अधिकतम तापमान लगभग 26.8 डिग्री सेन्टीग्रेड एवं न्यूनतम तापमान लगभग 0.7 डिग्री सेंडीग्रेड होता है।

इस प्रदेश की वनस्पतियों पर पहला अध्ययन प्रख्यात वनस्पतिविद सर जे० डी० हुकर ने 1848-1849 में किया था। वानस्पतिक दृष्टि से सिक्किम को तीन प्रमुख भागों में बाँटा जा सकता है।

1. अमनवृत्त (1500 मीटर की ऊँचाई तक)
2. समशीतोष्ण कटिबंधीय (1500-3900 मी० की ऊँचाई तक)
3. उच्च पर्वतशिखरीय (3900 मी० से ऊपर)

जैसे-जैसे हम सिक्किम की सीमा में नीचे से ऊपर की ओर बढ़ते हैं, हमें विभिन्न ऊँचाइयों पर निम्न प्रमुख पादप जातियां दिखतीं हैं।

1. डिलेनिया, अमूरा, सूजिनिया, बहूनिया, सोरिया। लैगरस्ट्रोमिया, टर्मिलेनिया, गारूगा, डल्बर्जिया,

दुआबंगा, कैस्टैनाप्सिस, फोइबे, कैलिकार्पा, इरिथ्रिना एवं ब्यूटिया (लगभग 900 मीटर तक)

2. सीमा, आस्टोर्डेस, कैस्टेनाप्सिस, मैकिलस, माइकेलिया, मैग्नोलिया संगम (1500 मीटर तक)
3. क्वेरकस, बेतुला, बाम्बू, मैग्नोलिया संगम (2100 मी० तक)
4. क्वेरकस, बेतुला, सूगा, पिसिया, रोड्रोडेन्ड्रान, रोजा, बाम्बूसा अरुनडिनेरिया संगम (2400-2700 मी०)
5. एबीज (डेन्सा प्रजाति), रोड्रोडेन्ड्रान, गाल्थेरिया, बरबेरिस, रोजा, वाइरबरनम, क्रोटेनियास्टर संगम (3000-3300 मी०)
6. जूनीपेरस, रोडोडेन्ड्रान, पोटेन्टिला, प्रिमुला, एनीमोन, कैसिओपी आदि जो छोटे-छोटे पत्थरों से ढकी पहाड़ की दरारों में पाए जाते हैं। (3600-4200 मी०)
7. रोडोडेनड्रान की तथा छोटी फैली हुई चटाई सदृश तथा रिउम, आरेनेरिया, ससूरिया, मिरिकेरिया, अर्टिका (हाइपरवोरिया) (4500-5100 मी०)

निचले स्तर पर साल (सोरिया लोबुस्टा) कहीं कहीं टीक (टेक्टोना ग्रैडिस), सैमल (बाम्बेक्स सीबा) जैसे उपयोगी वृक्ष पाए जाते हैं जिनकी लकड़ी काफी कीमती होती है। लगभग 4 मी० ऊँचा वृक्ष गान्टे या बांदरे फल के (गाइनोकार्डिया ओडोराटा) बीजों से प्राप्त तेल, कुष्ट रोग तथा चर्मरोगों की चिकित्सा में उपयोग किया जाता है तथा इसका उपयोग प्रसिद्ध चालमोगरा तैल में मिलावट के लिए उपयोग किया जाता है। इससे थोड़ी ऊँचाई पर चिलौने (सीमा वालिची), कटूस (कैस्टैनाप्सिस इन्डिका), पियाली (एकसबकलिंडिया पापुलनिया), अतिरा (अल्नसनेपालेन्सिस), टरमिनेलिया मिरिओकार्पा, दुआवंगा ग्रैन्डीफ्लोरा (लामपाते) आदि जैसे ऊँचे वृक्ष तथा महोनिया की अकेन्थीफोलिया, तथा नेपालेन्सिस प्रजातियां दिखती हैं। इससे ऊपर बढ़ने पर मैग्नोलिया एवं माइकेलिया की अनेक प्रजातियां पाई जाती हैं। 1500-1800 मीटर की ऊँचाई तक ट्रीफर्न की प्रजातियां (साइथिया गिगेन्सिया तथा साइथ्रिया स्पाइनोसा) बहुतायत से मिलती है। एन्डिओप्टेरिस इवैक्टा नामक दुर्लभ फर्न, जिसकी "स्केल" को स्थानीय लोग खाते हैं, भी यहां सुलभ है। फर्न की अनेक प्रजातियों में कुछ एक यहां के बाजारों में सब्जी के रूप में मिलती है।

अनावृत्त बीजी पौधों की लगभग 14 प्रजातियां प्राकृतिक रूप में मिलती है जब कि 15 जातियां रोपित हैं। इनमें प्रमुख हैं एबीज, डेन्सा, सुगर, ड्यूमोसा, जूनीपेरस रिकर्वा, जु स्कवैमाटा, पाइनस राक्स., साइकस फैक्टीनाटा, टैकसस वकाटा आदि। बर्फीली चोटियों पर पोडोडेन्ड्रान की प्रजातियां रिडम, नौबिले, ससूरिया आबवेलाटा (ब्रह्म कमल) स० गोसिपीफोरा तथा अन्य 30 प्रजातियां एवं भेद, मेकोनाप्सिस हारिड्यूला (ब्लू पापी) तथा अन्य प्रजातियाँ, प्रिमुला, एनिमोन, पेडिकुलेरिस प्रजातियों के लुभावने फूलों वाले पौधे जो पूरी धरती को एक रंगीन दरी की शोभा प्रदान करते हैं। इन्हीं स्थानों पर नार्डोस्टेकिस जटामाँसी (जटामाँसी) पिकोराइजा कुरोआ (कुटकी) पैनेक्स स्यूडोजिन्सेंग (अजम्बरी बूटी) एकोनिटम की प्रजातियाँ आदि जैसे उपयोगी औषधि पौधे भी पाए जाते हैं। बेतुला यूटिलिस (भोजपत्र) भी 3900-4300 मीटर की ऊँचाई पर मिलता है।

रोडोडेन्ड्रान निचले सबसे ऊँचाई पर प्राप्य वृक्ष श्रेणी का पौधा है जो धरती से मात्र 45 सेमी ऊँचा तक होता है। इसकी शाखाएँ आदि बर्फ से निकलती सी दिखती हैं। यही पर आर्टिका हाइपरकोरिया नामक झाड़ी नुमा पौधा भी मिलता है जिसे साग के रूप में उपयोग किया जाता है। इनके अतिरिक्त पिंगीकुला, ड्रासेरा तथा

युट्रिकुलेरिया जैसे कीट भक्षी पौधों की प्रजातियाँ भी मिलती है।

औषधिय पौधे :

यहाँ कितने ही औषधीय लुभावने तथा अन्य प्रकार से उपयोगी वृक्ष झाड़ियाँ तथा शाकीय पौधे पाए जाते हैं जिनका ज्ञान अभी तक आधुनिक समाज को नहीं है। हाल ही में लेखक को पता लगा कि 'खीरू' नामक आर्किड (सेटाइरियम सिलिएटम) की जड़ों को आलू की तरह खाने में उपयोग किया जाता है। इसका उपयोग अभी तक विश्वस्तर पर ज्ञात नहीं था। इसी प्रकार एक अन्य जंगली शाकीय पौधा ''बुकी फूल'' (ग्रेफेलेयिम एपिनी) के फूलों का उपयोग तकियों में रूइ के स्थान पर भरने के उपयोग में लाया जाता है तथा तकिए को स्पाइन्डिलाइटिस (गरदन का दर्द) के रोगियों को दिया जाता है। यह उपयोग भी अभी तक बाहरी जगत को ज्ञात नहीं था।

कंचनजंघा राष्ट्रीय उद्यान :

850 वर्ग किमी क्षेत्र में फैली यह विश्व के सबसे ऊँचाई पर स्थित पार्कों में से एक है तथा विश्व की तीसरी ऊँची चोटी इस प्रदेश में आती है। इसके पूर्वी एवं दक्षिणी भाग की ऊँचाई 1800-3000 मीटर तथा पश्चिम एवं उत्तरी भाग की ऊँचाई 3000-6000 मी० तक है। इसमें अनेक दुर्लभ जीव-जन्तु स्वछन्द विहार करते हैं तथा सिक्किम के पेड़ पौधों की अधिकतम प्रजातियाँ यहाँ प्राप्त हैं।

इसके अतिरिक्त यहाँ फार्म-बंगला-अभयारण्य, देवराली- अभयारण्य तथा कबी एवं केचीपैरी जैसी अनेक पवित्र गुफाएँ हैं जहां अनेक पेड़ पौधों तथा जीवों को संरक्षण प्राप्त है। परन्तु अतुलनीय वनस्पति संपदा से धनी इस प्रदेश के अस्तित्व को आज मानव की उत्तरोत्तर बढ़ती लालसा से एक बड़ा खतरा पैदा हो गया है। वनों की निरंतर कटाई के फलस्वरूप प्राकृतिक वन सिकुड़ कर मात्र कुछ क्षेत्रों तक सीमित रह गए हैं। कहने को तो यहां 36 प्रतिशत क्षेत्र में वन हैं परन्तु 'ए' वन मात्र धूपी (क्रिप्टोमेरिया जापोनिका), चीड़ (पाइनस की प्रजातियाँ) सदृश विदेशी पौधों के माध्यम से उत्पन्न की गई मृगमरीचिका सदृश है। तेजी से बढ़ने के कारण इन वृक्षों द्वारा हरियाली दिखती है तथा रिमोट-सेन्सिंग आदि जैसी आधुनिक तकनीकों से भ्रामक आंकड़ों के सृजन में सहायक होती है। परन्तु वास्तविकता तो यह है कि इन विदेशी पौधों की बढ़ती संख्या के फलस्वरूप अनगिनत स्थानिक तथा उपयोगी प्रजातियाँ समय से पहले ही लुप्त होती जा रही हैं। ऊतिस, पानी साज, लामपाते आदि वृक्षों की छत्रछाया में जो हरा-सोना इस प्रदेश की धरती में छिपा था वह लुप्त होता जा रहा है

इस छोटे से प्रदेश में अत्यन्त ऊँची क्षमता वाले 6 जल विद्युत योजनाएँ भी प्रारम्भ हो रही है। इस योजना के समर्थकों का दावा है कि इससे प्रदेश को पूर्ण बिजली प्राप्त होगी। परन्तु जीव-विज्ञानी एवं पर्यावरणविदों की दृष्टि में भारत के इस वैभवशाली प्रदेश के विनाश की यह पूर्व संध्या सी लग रही है। शायद मात्र यही ऐसा प्रदेश है जहां जनसाधारण में पर्यावरण चेतना अभी तक जागृत नहीं हुई है। आज आवश्यकता है यहाँ के जनमानस में पर्यावरण चेतना जागृत करने की जिससे वन्य-जीव संपदा एवं पर्यावरण की सुरक्षा यहां के लोग खुद ही कर सकें।

अम्मी मेजुस लिनः चिकित्सा में उपयोगी पौधा

डा० (कु०) देबजानी बसु
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी परिमंडल, देहरादून

भारत में औषधीय पौधे प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं, जिनका वर्षों से मानव कल्याण के लिये उपयोग किया जाता रहा है। इनके अतिरिक्त समय समय पर औषधीय महत्व के अनेकों विदेशी पौधों को भी भारतीय जलवायु में उगाने के प्रयत्न किये गये। इनमें से ऐसा ही एक पौधा है अम्मी मेजुस लिन। गाजर कुल का यह पौधा मूलतः भूमध्यसागरीय प्रदेश, उत्तर दक्षिण अमेरिका, उत्तर अफ्रिका, यूरोप, एशिया में पाया जाता है।

अम्मी मेजुस लिन एक नीली हरी शाक है जो 1-2 मीटर ऊंची होती है। इसकी जड़ें सफेद व पत्तियां पौधों में एकान्तर लगी होती है। इनकी पत्तियां चम्मचनुमा तथा पत्तियों का डंठल तने को घेरे रहता है। फूल छत्रकों में होते हैं व एक छत्रक में 10-30 तक रश्मियां होती हैं, जिनकी लम्बाई 1-4 से० मी० तक होती हैं। फूल उभयलिंगी व पंचावयवी होते हैं। जयांग अधोपुष्पी तथा फल धारीदार रम्भीय, वेश्मस्फोटि होते हैं ओर पकने पर दो एकास्फोटि में अलग हो जाते हैं।

भारत में यह पौधा सर्वप्रथम वन अनुसंधान संस्थान में, 1955 में (यूनेस्को के माध्यम से) लगाया गया था। धीरे-धीरे देश के अन्य भागों में भी इसे लगाया जाने लगा। अच्छी उपज के लिए जमीन को अच्छी तरह जोत कर बीजों को छितराकर या पंक्तियों में बो दिया जाता है। बीज 10-15 दिनों के भीतर उगना शुरू कर देते हैं।प्रयोगशाला में इससे भी कम समय में बीज प्रस्फुटित हो जाते हैं। पौधे की अच्छी बढ़त के लिए गोबर या खाद का प्रयोग किया जाता है। प्रति हेक्टेयर 5-10 कि० ग्रा० सुपर फास्फेट तथा 2:2:1 के अनुपात में नाइट्रोजन फास्फोरस और पोटैशियम का प्रयोग फलों में प्रभावी तत्वों की वृद्धि में सहायक होते हैं।

बोने के 3-4 माह के उपरान्त पौधे में फूल आने लगते हैं व छः महीनों में फल तैयार हो जाते हैं। फूल, फल और उनमें काउमेरिन्स की मात्रा सूर्य की रोशनी पर भी निर्भर करती है। फल प्राप्त करने के लिये पौधों को लगभग आधी ऊँचाई पर काटा जाता है और सुखाने के लिये एकत्रित कर दिया जाता है। जब फल सूख कर गिरने लगते हैं तो इनमें से बीजों को फटक कर अलग कर लिया जाता है।

प्रभावी तत्व मुख्यतया परिपक्व हरे फलों से प्राप्त किये जाते हैं। रासायनिक विश्लेषणों से अम्मी मेजूस के फलों में आठ काउमेरिनों की पहचान की जा चुकी है। ये निम्न वर्गों में रखे जा सकते हैं : -

1. लीनियर फ्यूरानोकाउमारिनः बेर्गाप्टेन, इसोइम्पोशटोरिन, जैन्थो टाक्सिन, इम्पेराइटोरिन व इसोपिम्पिनेलिन।
2. एन्गुलर फ्यूरानोकाउमारिनः इसोबेर्गाप्टेन
3. लीनियर डाइहाइड्रोफ्यूरानोकाउमारिन, मार्मोसिन व मार्मोसिनिन।

चिकित्सा विज्ञान में इस पौधें का उपयोग वर्षों पुराना है। अरब देशों में इसके फलों का उपयोग श्वेतदाग के उपचार के लिये किया जाता था। रोगी को इसके बीजों का चूर्ण बनाकर खिलाया जाता था। व एक दो घंटे तक रोग ग्रस्त भागों को सूर्य की किरण के सम्पर्क में आने दिया जाता था। इस उपचार से रोगी की त्वचा

धीरे-धीरे स्वस्थ हो जाती थी। सन् 1923 में दाऊद अल अंताकी ने भी इसकी पुष्टि की और कहा कि अम्मी मेजुस के फलों का अदरख के प्रकंद के साथ मिश्रण भी इस रोग में लाभदायक होता है। पौधों के इन गुणों ने अन्य मिश्रवासियों को अम्मी मेजुस के फलों में विद्यमान प्रभावी तत्वों की जानकारी प्राप्त करने के लिये प्रेरित किया। परिणामस्वरूप आज कई फ्यूरानोकाउमेरिन की खोज की जा चुकी है। इन फ्युरानोकाउमेरिन के कारण ही अम्मी मेजुस उपयोगी पौधा सिद्ध हुआ है। इसमें उपस्थित संघटक ''विटिलागो'' नामक बीमारी में भी प्रभावी पाये गये हैं।

उपरोक्त अध्ययन निश्चित ही इस बात के लिए प्रेरित करता है कि इस पौधे पर अधिकाधिक अनुसंधान किया जाये, जिससे कि इसमें छिपी गुणवत्ता का दोहन किया जा सके।

आंगन में बहार

श्रीमती सुषमा भटनागर, उत्तरी परिमण्डल, देहरादून

सृष्टिकर्ता ने जीवनयापन के लिए भरपूर साधन दिये हैं। पृथ्वी के गर्भ में यदि खनिज भण्डार हैं तो सीने पर हरे भरे वन। अपने अन्दर प्राणियों के लिए जीवनोपयोगी वस्तुयें संजोये ये वन पर्यावरण संतुलन की अतिरिक्त भूमिका भी निभाते हैं। उपरोक्त कारणों से ही वनों को अत्यधिक सम्मान दिया गया है, दुर्भाग्यवश हमने इन परोपकारियों को निरीह पशुओं की तरह काटकर संपूर्ण प्राणिजन के लिए विपत्तियों के बीज बो दिये हैं। आज जो विषम परिस्थितियां हमारे सामने हैं, उनके जनक हम स्वयं हैं। इनसे बचने के लिए हम पुनः वृक्षों की शरण लेने के लिए बाध्य हुए हैं। वृक्षारोपण अभियान इसी ओर एक कदम है। तो क्यों न हम घर आंगन में भी वृक्ष लगायें। विशेषतया ऐसे वृक्ष जो सुन्दरता बढ़ाने के साथ साथ उपयोगी भी हों व स्थान भी अधिक न लेते हों। वृक्षों की निम्न जातियां इसके उपयुक्त हो सकती हैं।

1. अमलतास (कास्मिया फिस्तुला) :

यह एक पर्णपाती मध्यम ऊँचाई वाला वृक्ष है और 1200 मी० की ऊँचाई तक पाया जाता है। इसके पुष्प पीले रंग के व पत्तियाँ गोलाई लिये लम्बी होती हैं। यह बीजों द्वारा लगाया जा सकता है। एक साल पुराने बीजों को पांच मिनट पानी में उबालकर मार्च-अप्रैल में क्यारियों या टोकरियों में बो देना चाहिये तथा अच्छी तरह सिंचना चाहिये। आठ या नौ दिनों में बीज अंकुरित हो जाते हैं। छोटे पौधों को वर्षा ऋतु में निर्धारित स्थान पर लगा देना चाहिए।

अमलतास की लकड़ी हल्का या इमारती सामान बनाने के काम आती है। कुछ आदिवासी जातियां इसके फलों का सब्जी के लिए भी उपयोग करते हैं। पत्तियों को छाछ के साथ पीस कर दाद पर लगाने से लाभ होता है। फलियों का गूदा कब्ज दूर करने में सहायक होता है।

2. कू ड़ा इन्द्रजौ (हो लारहे ना एन्टीडाइसे न्टे रिका)

मध्य ऊँचाई का पर्ण पाती वृक्ष है और भारत में 1200 मी० तक की ऊँचाई पर लगभग हर जगह पाया जाता है। यह एक जाना पहचाना औषधोपयोगी वृक्ष है। इसके फूल मई-जून में खिलते हैं जो छोटे सफेद या हल्के पीले होते हैं। इसे भी बीजों के द्वारा उगाया जा सकता है। बीज वर्षा शुरू होते ही बो दिये जाते हैं। सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है।

इस पेड़ के तने जड़ों की छाल अमीबीय पेचिश में दी जाने वाली दवा बनाने में प्रयुक्त होती है। बवासीर, मरोड़ जलन तथा पित्त आदि रोगों में भी तने तथा जड़ की छाल को उबाल कर छना हुआ पानी दिया जाता है। जड़ों व पत्तियों को पीसकर प्रसव के बाद होने वाले रक्तस्राव को रोकने के लिए दिया जाता है। पत्तियों का प्रयोग पुराने ब्रोंकाइटिस में एवं फूलों का प्रयोग रक्तशोधक के रूप में किया जाता है। पत्तियों से नीला रंग भी प्राप्त किया जाता है।

3. कचनार (बाउहीनिया बेरीगाटा) :

यह भी मध्य ऊँचाई का पर्णपाती वृक्ष है और पूरे भारत में पाया जाता है। उसके फूल सुगंधित एवं फरवरी-अप्रैल में पुष्पित होते हैं। चार पंखुड़ियां सफेद व एक लाल या बैंगनी होती है, जिन पर मध्य में उभरी लाल धारी व आधार के पास से निकलती लाल या बैंगनी धारियां होती हैं।

इस वृक्ष की छाल चर्म रोगों व फोड़ों के उपचार में प्रयुक्त होती हैं, फूलों की कलियां सब्जी के रूप में बाजार में बिकती देखी जा सकती हैं। पत्तियां पशुओं के लिए अच्छा चारा समझी जाती हैं।

4. दाड़िम (प्यूनिका ग्रानाटम) :

5-10 मीटर ऊँचाई वाला यह झाड़ीनुमा पेड़ हिमालय के कुछ भागों में 900-1800 मीटर की ऊँचाई तक प्राकृतिक रूप में उगता है। इसको बीजों व कलमों द्वारा उगाया जाता है। कलमें 25-50 से०मी० लम्बी व 2-4 कलियों युक्त होनी चाहिए।

इसका उपयोग अधिकतर पाचन संस्थान को ठण्डा रखने के लिए किया जाता है। छाती की जलन आदि में प्रयुक्त होने वाली औषधियों में इसका उपयोग किया जाता है। अनार का सख्त छिलका पेट के कई विकारों में प्रयुक्त में होने वाली औषधियां बनाने में काम आता है। इसकी कलियां हृदय रोगों में दी जाने वाली औषधियां बनाने में भी प्रयुक्त होती हैं। पेड़ की छाल को पानी में उबाल कर उस पानी को पिलाने से पेट के कीड़े निकल जाते हैं। इसके फूलों से लाल रंग प्राप्त होता है।

5. हरसिंगार (निकटान्थस अर्बोरट्रिस्टस) :

लगभग 10 मीटर ऊँचा यह वृक्ष भारत में प्रायः हर जगह पाया जाता है। इसको "शेफाली" या 'पारिजात' नाम से भी जाना जाता है। इसको अधिकतर फूलों की सुगन्ध तथा सुन्दरता के लिए लगाया जाता है। इसके फूल सफेद-नारंगी रंग के होते हैं। यह बीजों के द्वारा या कलमें लगा कर भी उगाया जाता है। यह अगस्त से दिसम्बर तक फूल देता है। फूल प्रायः सायंकाल तक खिलते है और दूसरे दिन सुबह झड़ जाते हैं।

फूलों से प्राप्त रंग रंगने में व केसर के स्थान पर भी प्रयोग में लाया जाता है। इसकी पत्तियों व छोटी-छोटी कोमल शाखाओं को पानी में उबाल कर छने हुये पानी को पित्त व कफ दूर करने में उपयोग होता है। इसकी पत्तियों का रस कीड़ों (राउण्ड वर्म) व (थ्रेडवर्म) को निकालने के लिए भी प्रयुक्त होता है। बीजों को पीस कर सिर पर लगाने से रूसी दूर हो जाती है।

तो आइये क्यों न हम इन पौधों को अपने आंगन में लगाकर बहार को आमंत्रित करें।

सूरजमुखी कुल के सुगन्धित तेल युक्त पौधों पर एक नजर

रेशमा माथुर
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी परिमंडल, देहरादून

मनुष्य जीवन में सुगंध का जीवंत स्थान है जिसका प्रयोग मानव आदि काल से किसी न किसी रूप में करता आ रहा है। सुगंध का इतिहास मानव-सभ्यता के इतिहास जितना पुराना है, जिसका एक महत्वपूर्ण उदाहरण मिस्र के पिरामिडों में रखी "ममीयां" हैं जो कई हजार वर्षों से सुगंधित तेल एवं मसाले द्वारा सुरक्षित रखी हुईं हैं।

प्रकृति से सुगंध विभिन्न स्रोतों से प्राप्त की जाती हैं जिनमें पेड़ पौधे प्रमुख हैं। भारत में सुगंधित पेड़ पौधों की संख्या विश्व में सर्वाधिक है। सद्गोपाल (1943) के अनुसार सुगंधित तेलों की कुल 1,500 जातियों में से 1,000 जातियां भारत में पायी जाती हैं, किन्तु फिर भी आज हम अपनी बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये विदेशों से इनका आयात कर रहे हैं। जिसका मुख्य कारण इस वनस्पति संपदा के अध्ययन की ओर उचित ध्यान न देना है। इस लेख में हिमालय के पश्चिम भाग में पाये जाने वाले सूरजमुखी कुल के कुछ ऐसे जंगली पौधों का वर्णन है जिनकी उपयोगिता का ज्ञान अभी तक सीमित है। ये पौधे जंगलों में सूरजमुखी कुल के अन्य अवर प्रेधीय पौधों के साथ उगते हैं। जिससे इनमें परस्पर प्राकृतिक संकरण-प्रक्रिया हो जाती है और इन पौधों के उपयोगी गुणों में उन्नति होती जाती है। अतः यदि हम भली भांति इनका अध्ययन करें तो इनके कई अज्ञात उपयोगी गुणों को भी प्रकाश में लाया जा सकता है। यदि आधुनिक वैज्ञानिक तकनीकों द्वारा इनके संरक्षण व उत्पादन की व्यवस्था करने के साथ इनके प्राकृतिक संतुलन को न बिगड़ने दिया जाये, तो फिर से भारत का नाम विश्व में सुगंधित पदार्थों के निर्यात करने वाले देशों की श्रेणी में आने के साथ-2 अर्थव्यवस्था सुदृढ़ हेतु विदेशी मुद्रा अर्जित किया जा सकता है।

1. सेनीसिओ जैक्यूमौनशीयानाः

यह एक सीमित क्षेत्री पौधा है जो देश के उत्तर पश्चिम भाग में 3,000-3,500 मी० की ऊँचाई तक पानी के किनारे पाया जाता है। कश्मीर में इसे पुश्कर नाम से जाना जाता है। खेतों में यह पौधा अपने 1-2 मी० लम्बे व मजबूत तनों चौड़ी पत्तियों लगभग 30 से० मी० तथा सुन्दर, चमकदार पीले पुष्पों के घने शंकु के द्वारा आसानी से पहचाना जा सकता है। इनके बीजों में सुगंधित तेल की मात्रा 1.2 प्रतिशत तक होती है, इस तेल का व्यापारिक दृष्टि से अत्यधिक महत्व है क्योंकि इस तेल की सुगंधयुक्त तेल (सास्सुरिया लावा) से बहुत मिलती जुलती है व इसी कारण इसे कुथ तेल के साथ मिलावट में प्रयोग में लाया जाता है। इसके अतिरिक्त इस का उपयोग औषधि के रूप में भी होता है। कश्मीर में लोग इसकी जड़ों से नाड़ी तंत्र के रोगों के लिए टानिक बनाते हैं।

2. सेनिसिओ क्राइसेन्थीमोइडिस

हमारे देश में सेनीसिओ की यह जाति काश्मीर से सिक्किम तक 2400-3800 मी० तक की ऊँचाई में पाई जाती है। भारत के पूर्वी भागों में यह पौधा 'खासी' व आका पहाड़ियों के निचले स्थानों में मिलता है। ये 60-180 से० मी० लम्बे, मजबूत व गठीले तनेवाले होते हैं। जो कि अपनी गहरी कटी हुई पत्तियों तथा पीले पुष्पों के कारण आसानी से पहचाने जा सकते हैं। ये प्रायः खुले पहाड़ी ढलानों पर घास के साथ उगते हैं। इन पौधों के तनों से एक प्रकार का सुगंधित तेल प्राप्त

होता है, जिसकी मात्रा का सही ज्ञान अभी तक नही हुआ है, परन्तु व्यापारिक स्तर पर उपयोग हेतु वैज्ञानिक तकनीकों के प्रयोग से तेल की सही मात्रा का ज्ञान हो सकता है।

3. **स्फीचरेन्थस इन्डीकस**

30-60 से० मी० लम्बे ये पौधे भारत के मैदानी भागों में मुख्यतया धान के खेतों में कुमाऊँ से सिक्किम तक 1500 मी० तक की ऊँचाई पर उगते हैं। स्थानीय भाषा में इसे मुण्डी नाम से जाना जाता है। उनके पुष्प गेंदाकार बैंगनी रंग के तथा शाखायें सफेद रोएदार होती हैं। जिनके द्वारा खेतों में यह आसानी से पहचाने जा सकते हैं। इन पौधों से 0. 01-0. 02 प्रतिशत तक लाल रंग का गाढ़ा तेल भी पाया जाता है। तेलों के अतिरिक्त इन पौधों के प्रत्येक भाग का उपयोग किसी न किसी रूप में किया जाता है। इससे प्राप्त अर्क का उपयोग त्वचा रोगों, गैस विकार एवं यकृत की बीमारियों में औषधि के रूप में किया जाता है। उसकी जड़ों को चीनी के साथ उबाल कर जुकाम खांसी तथा छाती के दर्द में दिया जाता है। इन पौधों के आश्चर्यजनक तपैदिक-नाशक क्षमता भी पायी जाती है। घरों में अनाज के भण्डारण में कीटों से सुरक्षित रखने के लिए इन पौधों को अनाज के साथ मिलाकर रखा जाता है। इन पौधों की सब्जी बनाकर भी खाई जाती है।

4. **इन्थूला रेसीमोसाः**

ये पौधे भारत के उत्तर पश्चिम भागों में प्रायः नमी वाले स्थानों पर 2700 मी० की ऊँचाई तक उगते हैं। 30-150 से० मी० तक लम्बे तथा गठीले तनों वाले होते हैं तथा अपनी चर्म-वत् पत्तियों (जिसकी निचली सतह पर हल्की पीले रंग की रोंएदार पर्त होती हैं) तथा बड़े आकर्षक पीले पुष्पों के कारण आसानी से पहचाने जाते हैं। इनकी जड़ों से 0. 38 प्रतिशत तक सुगन्धित तेल प्राप्त होता है, जिसका उपयोग आयुर्वेद एवं यूनानी तथा दशमूलारिष्ट व कफलीना जैसी प्रसिद्ध औषधियां बनाने में किया जाता है। औषधि के क्षेत्र में इसका व्यापारिक नाम पुष्कखल है।

5. **आर्टीमीसिआं डेकनूकुलसः**

ये बहुवर्णीय सुगंध युक्त शाकीय पौधे कश्मीर तथा लाहूल (हिमाचल प्रदेश) में 4800-5100 मी० की ऊँचाई तक पाये जाते हैं। ये पौधे लगभग एक मी० लम्बे व लम्बी पतली गहरे रंग की पत्तियों वाले होते हैं। इनमें तले तथा शाखाओं पर पत्तियों के झुंड निकलते हैं। इन पौधों से 0. 07 से 0. 3 प्रतिशत तक सुगंधित तेल प्राप्त होता है। इनकी पत्तियों तथा सुगंधित तेल का उपयोग मसालों की तरह तथा सिरके को सुगंधित करने में किया जाता है।

6. **आर्टीमीसिआ पार्वीपलोराः**

हिमालय के पहाड़ी भागों में 3600 मी० तक की ऊँचाई पर पायी जाने वाली इस जाति के तने लम्बे तथा अशाखित होते हैं। निचली पत्तियाँ त्रिशाखित होती हैं, जिनकी ऊपरी भाग भूरा हरा होता है। इनके पुष्प क्रम तथा तनों व शाखाओं के ऊपरी भाग में होते हैं। इनके पुष्प बहुत छोटे हल्के भूरे रंग के होते हैं।

इन पौधों से 0. 2 प्रतिशत तक तेल प्राप्त होता है, जो एन्टीसेप्टीक के रूप में उपयोग में लाया जाता है। इसके अतिरिक्त पत्तियों व ताजे पुष्पों का प्रयोग स्नायुरोगों एवं आमाशय सम्बन्धी रोगों के निवारण में किया जाता है।

भारत में आर्टीमीसिआ वंश की अधिकतर जातियां ''इत्र उद्योगों में सबसे ज्यादा प्रयोग में लायी जाती हैं इसी लिए आवश्यक है कि इन दोनों स्वजात जातियों का संरक्षण किया जाये व इनके प्राकृतिक स्थानों को भी न बिगड़ने दिया जाये।

उपरोक्त वर्णित पौधों के साथ प्रायः कुछ ऐसे और भी पौधे उगते हैं जो देखने में इनसे काफी मिलते जुलते हैं तथा जिनको आसानी से जंगलों में नहीं पहचाना जा सकता है। जैसे- सेनिसिओं, केल्थिफोनियस, सेनीसिओं अम्लेक्सीकाउलिस तथा कई लिंग्यूलेरिया की जातियां। इन पौधों का भी वैज्ञानिक तकनीकों द्वारा अध्ययन किया जाना चाहिए जिससे कि सुगंधित तेल उत्पादन की क्षमता का सही पता लगाकर दोहन किया जा सके। उदाहरण के लिए कोशिकानुवांशिकी एवं आनुवांशिक अभियांत्रिकी तकनीकों का उपयोग कर इनमें उपस्थित सुगंधित तेलों का प्रतिशत बढ़ाया जा सकता है व प्रजातियां विकसित की जा सकती हैं।

बागवानी एवं सजावट के फूलों का भण्डारः पश्चिम हिमालय

पी० सी० पन्त
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी परिमण्डल, देहरादून

पश्चिम हिमालय का विस्तृत क्षेत्र कश्मीर से लेकर उत्तर प्रदेश के पर्वतीय क्षेत्र तक फैला हुआ है। वनस्पति की दृष्टि से इस क्षेत्र में 3300 मी० 5600 मी० तक की ऊँचाई के स्थान अधिक महत्वपूर्ण हैं। पश्चिमी हिमालय की वनस्पति में अनेकों विविधताएं देखने को मिलती है जिनमें पड़ोसी क्षेत्रों जैसे चीन, तिब्बत, पामीर एवं कराकोरम पर्वत श्रृंखलाओं के भी अनेकों आकर्षक एवं शोभनीय पौधे विद्यमान हैं।

यद्यपि पश्चिमी हिमालय में ऊँचाई वाले स्थान वर्ष में अधिकांश समय तक बर्फ से ढ़के रहते हैं लेकिन मार्च-अप्रैल से बर्फ के पिघलने पर शनैः शनैः इन स्थानों की वनस्पतियाँ अनेकों प्रकार के पुष्पीय पौधों की रंग बिरंगी छटा दिखलाना प्रारम्भ कर देती हैं।

हिमाद्रि क्षेत्र के निचले भागों में यदा कदा विशाल चारागाह भी पाये जाते हैं। जो वनस्पति की विविधताओं के स्त्रोत हैं। यदि पश्चिमी हिमालय से बागवानी एवं सजावट के फूलों वाले पौधों का कारोबार किया जाये तो एक अच्छा खासा उद्योग इस क्षेत्र में स्थापित किया जा सकता है ।शोभनीय फूलों वाले पौधों की संख्या सैकड़ों में हैं। यदि इस कारोबार को उचित प्रोत्साहन मिले एवं व्यक्ति विशेष इसमें रूचि ले तो सामान्य रूप से चिर परिचित गुलाब, डहेलिया, नरगीस, जीनिया, पूलाक्स, गुलदाउदी, बागेनवीलिया, ल्युधिन एवं गेंदा के अतिरिक्त अन्य अनेकों पुष्पीय पौधे भी हैं जिन्हें आम तौर पर जंगली फूलों के नाम से ही सम्बोधित कर तिरस्कृत सा किया जाता है, जबकि इनमें बागवानी एवं सजावट के लिए उपयोग में लाने की पर्याप्त क्षमता विद्यमान है।

जुलाई माह के मध्य से लेकर सितम्बर माह तक पश्चिमी हिमालय के अनेकों स्थानों से जैसे विश्नेसर व गंगवाल से होकर सोनमर्ग बंगतताल लिडर घाटी, अहरबाल, किश्तवार एवं जन्सकर श्रेणी आदि (कश्मीर), कुलु मनाली, बारा, लाचा दर्रा, रोहतांग दर्रामीपा, महेशव, पार्वती घाटी आदि (हिमाचल प्रदेश) और निलंग तपोवन, खतालिंग, मासरताल, सहस्त्र ताल, नीति माना, सुगनाथ, अमृत गंगा घाटी, रालम घाटी, ब्रजकांग दर्रा, नीलम, मारतोली, पिन्डर घाटी, काली घाटी, गोरी घाटी एवं मानसरोवर (उ० प्र०) की ओर जाने वाले रास्ते के इर्द गिर्द से आकर्षक पुष्पों के बीज आदि एकत्र किए जा सकते हैं।

यहां पश्चिम हिमालय क्षेत्र के कुछ ऐसे रोचक फूलों वाले पौधों का विवरण प्रस्तुत है जिन्हें घरों के प्रांगण में वाटिकाएं अथवा क्यारियां बनाकर या आवासीय कक्षों में गमलों में उगाकर लोकप्रिय बनाया जा सकता है।

सफेद प्राय गुलाबीपन लिये लुभावने बड़े फूलों वाला ऐनीमोन रूपीकोला का पौधा, सुनहरे पीले फूलों वाला एडेनिस क्राइसो सायथस, सफेद फूलों वाला पिओनिया इमोडी गुलाबी, बैंगनी या सफेद रंगों में छितरे हुए गुच्छेदार फूलों में कोरिस्पोरा सैवुलोसा धानी रंगों के शीर्षस्थ समूहों के रूप में थरगापेसिस बारबेटा लाल या हल्के गुलाबी रंगों के आकर्षक फूलों वाला इन्डिगोफेरा हिटरैन्था पीले एवं लाल रंग के फूलों वाला जीअम इलोटम् पीले, नारंगी या गहरे लाल रंग के बड़े फूलों वाला पोटोन्टेला अट्रेसेगुंइनिया गुलाबी लुभावने फूलों वाला

इपिफोबियम लैटिफोलियम हल्के पीले रंग के बेलनाकार फूलों के गुच्छों वाला पेडिकुलारिस बाइकार्नुटा, पीले रंग के फूल कुछ हल्का गुलाबीपन एवं लालिमा मिश्रित घने गुच्छों में पेडिकुलारिस ओईडेरी का पौधा गुलाबी रंग के घने फूलों वाला पेडिकुलारिस पिरामिडाटा, गुलाबी रंग के छितरे किन्तु घने फूलों वाला पेडिकुलारिस पैक्टीनेटा, हल्के पीले रंग के नाव की आकृति में सह पत्र (जो फूल होने का भ्रम देते हैं) के रूप में साउस्सुरेआ या औब्वालाटा, बरफ की गेंद सा दिखने वाला एक विचित्र आकार का पौधा साउस्सुरेआ गोसिपिकोरा, सफेद रंग के आकर्षक पुष्पक्षत्र फूलों वाला फ्ल्युरोस्पर्म कैन्डोलाई।

पश्चिमी हिमालय में उपलब्ध सुन्दर फूलों के पौधों को बागवानी में लोकप्रियता मिली तो आशा की जा सकती है कि यह शोभनीय फूल आकर्षक चित्रों से युक्त पुस्तक-पुस्तिकाओं के दायरे से निकल कर विज्ञापनों के माध्यम ही न रह कर, सजीव रूप में अपना स्थान वाटिकाओं में बना पायेंगे। इससे वर्तमान मनुष्य के तनावपूर्ण क्षण कुछ सीमा तक आनन्द के क्षणों में परिवर्तित हो सकेंगे जो कि जन मानस के रहन सहन के तरीके और वातावरण में फेर बदल लायेंगे और एक नवीन क्रियात्मक वातावरण का निर्माण किया जा सकेगा।

अण्डमान निकोबार द्वीप समूह के वर्षा वन

डा० एस० के० श्रीवास्तव
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पोर्ट ब्लेयर

अण्डमान निकोबार द्वीप समूह भारत के कोरोमंडल तट से लगभग 1,176 कि० मी० की दूरी पर बंगाल की खाड़ी में 6^0 एवं 14^0 उत्तर तथा 92^0 एवं 94^0 पूर्व की भौगोलिक सीमाओं के बीच स्थित है। कुल छोटे-बड़े लगभग 319 द्वीपों से मिलकर बना यह द्वीप समूह लगभग 8,249 वर्ग कि० मी० के क्षेत्रफल में फैला है जिसके उत्तरी छोर पर माइनमार तथा दक्षिणी छोर पर सुमात्रा स्थित है।

भौगोलिक दृष्टि से ऐसा माना गया है कि अण्डमान द्वीप अराकनयोमा इमारती (Tectonic) इकाई का दक्षिणी विस्तार है तथा निकोबार द्वीप सुमात्रा पंक्ति विस्तार हैं। इन विभिन्न मिलापो का सीधा सम्बन्ध यहां की वनस्पतियों में देखी जाने वाली समानताएं एवं विषमताएं हैं।

ये द्वीप समूह भूमध्य रेखा के समीप उष्ण कटिबंध क्षेत्र में स्थित होने के कारण यहां का मौसम आम तौर पर गरम तथा अधिक नम रहता है। द्वीप समूह को वर्ष में दो मानसूनों का सामना करना पड़ता है, पहला दक्षिण पश्चिमी मानसून जो मई से अक्टूबर तक रहता है, दूसरा उत्तर-पूर्वी मानसून जो नवम्बर से दिसम्बर तक रहता है। यहाँ औसत वर्षा 300 - 380 सेमी, आपेक्षिक आद्रता 80% एवं औसत तापमान 22-350C तक रहता है। द्वीप समूह में वायु की गति 5 से 15 किमी प्रति घंटा है जो अलग-अलग मौसम में बदलती रहती है।

द्वीप समूह की प्राकृतिक दशा के कारण 50 से 90% वर्षा जल झरनों एवं प्राकृतिक नदियों से होकर समुद्र में मिल जाता है। कुल वर्षा एवं प्राकृतिक जल के बहाव एवं स्रोतों के पारस्परिक चक्र का अपना एक अलग महत्व है जिसका सीधा सम्बन्ध यहां की मृदा एवं वनस्पति से है।

भारत में 13% भूमि पर वन क्षेत्र हैं जिनमें से उष्णकटिबंधीय वर्षा वन केवल भूमध्य रेखा के क्षेत्रों में पाये जाते हैं। इन वनों में अपेक्षाकृत उच्च ताप उच्च वर्षा दर तथा अधिक नमी बनी रहती है जिसके अन्तर्गत वनस्पति एवं जीव जन्तुओं जैसी जैविक इकाइयों का अस्तित्व बना रहता है। भारत में यह वन पश्चिमी घाट, उत्तर पूर्वी क्षेत्रों तथा अण्डमान निकोबार द्वीप समूह में मिलते हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि कुल प्रजातियों में से दो तिहाई प्रजातियां इन्हीं वनों में होती है। ठण्डे स्थानों वाले वनों की तुलना में इन वनों में प्रति एकड़ लगभग दस गुना बड़े पेड़ों की प्रजातियां पायी जाती हैं जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण द्वीप समूह की वनस्पति है।

वर्षा का जल बहाव इस बात पर निर्भर है कि कितना जल वर्षा द्वारा गिरा है और उसका कितना भाग भूमि द्वारा अवशोषित किया गया है। भूमि द्वारा अवशोषित जल का सीधा सम्बन्ध उस स्थान पर मिलने वाली वनस्पतियों से हैं। जैसा कि हम बता चुके हैं कि उष्णकटिबंधीय वनों में बड़े वृक्ष की अधिक एवं घनी प्रजातियां होने के कारण सूर्य की रोशनी पूरी तरह से भूमि पर नहीं आ पाती जिसके फलस्वरूप भूमि पर उग रहे छोटे शाक, खर पतवार पूरी तरह से नहीं उग पाते तथा उन स्थानों पर वहां की मृदा में जल सोखने की क्षमता कम हो जाती है क्योंकि निरन्तर वर्षा होने से मृदा की उपरी सतह जिसमें उपयोगी तत्व होते हैं बह जाते हैं और भविष्य में नदी एवं समुद्री किनारों के कटाव होने शुरू हो जाते हैं। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए

प्रशासन की यह चेष्टा रहती है कि खाली भूमि पर वृक्ष लगायें।

द्वीप समूह के वनों में लगभग दो हजार सवृत प्रजातियां पायी जाती हैं जिसमें से 220 प्रजातियां क्षेत्रीय हैं। उसके अतिरिक्त 54% प्रजातियां ऐसी हैं जो मुख्य भूमि में मिलती हैं तथा 32% प्रजातियां अण्डमान निकोबार द्वीप समूह एवं दक्षिण पूर्वी एशियाई देश जैसे माइनमार, थाइलैंड तथा मलेशिया आदि में पायी जाती हैं।

यहां के सुन्दर घने हरित वर्षा वन जिसमें वनस्पतियों का अमूल्य खजाना है एक नजर डालें तो गगनचुम्बी गरजन (जिपटिरोकार्पस) के लम्बे वृक्ष जिनके बगल में ऊपर को चढ़ता बेंत (climbing bambo) तथा समुद्र के किनारे मिलने वाले महुआ (Manilkara littoralis) के विशालकाय सख्त वृक्ष देखने को मिलते हैं। इन वनों में मिलने वाली वनस्पतियों में अधिकतर सदाबहार प्रजातियां पायी जाती हैं। जो पूरे वर्ष हरी बनी रहती है। इनमें वृक्ष, शाक तथा बेलें आदि हैं। उसके अतिरिक्त कुछ अंश पर्णपाती तत्व के भी मिलते हैं, जैसे विविध प्रकार के ताड़, बेलें अधिपादपी तथा पर्णांग फर्न आदि पाये जाते हैं।

द्वीप समूह की उष्णकटिबंधीय वनस्पतियों को वनस्पति विषमताओं के आधार पर मुख्यतः दो भागों में बांटा गया है।

(अ) कोस्टल वनस्पति

वे जो समुद्र के किनारों पर मिलती हैं।

(ब) इनलैण्ड वनस्पति

(अ) कोस्टल वनस्पतियों को दो भागों में बांटा गया है :-

(i) लिट्टोरल वनस्पति

यह क्षेत्र समुद्र के किनारे समुद्र में हुए ज्वारा भाटा से उत्पन्न लहरों की दूरी तक का है जिसे टाइडल जोन भी कहते हैं। यह रेतीला होता है। इसमें मुख्यतः रेंगने वाली लती Ipmoea pes-capre तथा Vigna marina एवं Phyla nodiflora आदि वनस्पतियां मिलती हैं। ठीक उसके पीछे झाड़ी के रूप में Scaveola taccada तथा अन्दर की ओर मिलने वाले Pandanus andamenensium (केवड़ी) Hibiscus tiliaceus Barringtonia asiatica आदि छोटे बड़े वृक्ष दिखाई देते हैं।

(ii) कच्छ वनस्पति (मैन्ग्रोव)

यह वे वनस्पतियां है जो समुद्र की खाड़ी के निकट व उसके किनारे खारे व मीठे पानी के मिश्रण में मिलती हैं। इन पौधों का निचला हिस्सा सदैव पानी में डूबा रहता है और इस स्थान पर पानी की सतह ज्वार भाटा के आने से बढ़ती घटती रहती है। यह वनस्पतियां सदैव खारे व मीठे पानी के मिश्रण में रहने के कारण अपने में विभिन्न परिवर्तन लाती हैं जो इनके अस्तित्व को बनाए रखने में सक्षम होती हैं। इनमें मुख्य हैं Rhizophora mucronata जिसमें स्तम्भ जड़ें होती हैं, Brugueiria gymnorhiza में नीरूट पायी जाती है तथा Xylocarpus granatum एवं Sonnecretia sp. में श्वास जड़ें (pneumatophores) मिलते हैं यह सभी परिवर्तन लक्षण कच्छ वनस्पतियों की पहचान होती हैं। यह वनस्पतियां समुद्री किनारों की मृदा को कटने से रोकती हैं।

(ब) इनलैण्ड वनस्पतियां :

इन वनों में सदाबहार, पर्णपाती तथा घास के

मैदानी क्षेत्र सम्मिलित हैं।

(i) सदाबहार वन

इन उष्णकटिबंधीय सदाबहार वनों में काफी बड़े व ऊंचे वृक्ष लताएं तथा अधिपादपी घनी तादाद में पाये जाते हैं इनमें प्रमुख हैं Dipterocarpus griffithyii, planchonia andamanica, Baccaurea sapida, Dinochloa andmanica, Calamus longisetus तथा Dendrobium aphyllum.

(ii) पर्णपाती वन

यहां की वनस्पतियों में पूरे वर्ष काल में एक बार पत्ते झड़ जाते हैं और यह क्रम समय समय पर विभिन्न प्रजातियों में अलग अलग देखने को मिलती है। पर्णपाती वन मुख्यतः उत्तरी, मध्य तथा दक्षिणी अण्डमान के कुछ भागों में मिलते हैं। इनमें पायी जाने वाली वनस्पतियों में पडाक Pterocarpus dalbergioides, Terminalia procera, Canarium, Semicarpus kurzii तथा Ehinochloa crus-galli आदि प्रमुख हैं।

(iii) घास के मैदानी क्षेत्र

जिन क्षेत्रों में अधिक व अनियमित जंगल के कटाव निरन्तर हुए तथा वे पहाड़ी क्षेत्र जिनमें काफी समय तक वनस्पतियों का अभाव रहा है वे एक समय के अन्तराल के पश्चात घास के मैदानी क्षेत्र के रूप में दिखाई देते हैं। ऐसे क्षेत्र कार नीकोबार, ग्रेट निकोबार तथा दक्षिण अण्डमान के कुछ स्थानों में दिखाई देते हैं, इन वनस्पतियों में घास, शाक व झाड़ी प्रमुख हैं। इनमें Imperata cylindrica, Saccharum spontaneum, Desmodium heterocarpusn तथा Melastoma malabathricum आदि मुख्य वनस्पतियां हैं।

इस द्वीप समूह की आदिम जनजातियों जैसे निकोबारी, शोंपेन, ओंगी आदि ने अपने जीवन-यापन के लिए जो प्राकृतिक वनस्पतियां लगाई है उनमें नारियल, पैंडेनस, कैपसिकम तथा कोलोकेशिया प्रमुख हैं।

इसके अतिरिक्त वन विभाग द्वारा भी कुछ वनस्पतियों की प्रजातियों की खेती की जा रही है जिनमें पडाक Pterocarpus dalbergioides, टीक Tectona grandis तथा Red Oil Palm आदि हैं।

अन्त में हम यह कहना चाहेंगे कि इस द्वीप समूह में वनस्पतियों का अपार खजाना है जिसमें सभी प्रकार की उपयोगी, दुर्लभ व संकट ग्रस्त वनस्पतियां जो आज हमें देखने को मिल रहीं हैं उनका संरक्षण अति आवश्यक है क्योंकि इन वनस्पतियों के संरक्षण के द्वारा ही हम द्वीप समूह की परिस्थितिकीय एवं पर्यावरण को सन्तुलित रख सकते हैं।

परमार वंश कालीन प्रसाधनी पौधे

अरूप कुमार बनर्जी एवं डा० रथीन कुमार चक्रवर्ती
भारतीय वनस्पति उद्यान, हावड़ा - 711 103

सन् 825 में मध्य प्रदेश के उज्जैन, माण्डु धार एवं चन्देर जिलों तक सीमित मालवा राज्य के प्रथम शासक परमार राजवंश के श्री कृष्ण उपेन्द्रजी थे। कालान्तर में 1010 से 1060 तक राजा भोज ने अपने लम्बे शासनकाल में आयुर्वेदिक चिकित्सा में काफी रूचि ली। भोज-तंत्र एक संहिता समान है, जिसमें करीब-करीब सभी रोगों का विधान है। राजा भोज द्वारा रचित 'योग संग्रह' एवं 'रसराजसंग्रह' दो ग्रंथों का प्रकाशन आचार्य टिकमजी (बम्बई) ने सन् 1923 - 1924 में तथा बाद में योगसंग्रह का प्रकाशन चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी ने सन् 1966 में किया। राजाभोज ने अपनी औषधियों में पौधों तथा जीवजन्तुओं के सभी अंगों के अलावा खनिज पदार्थों एवं मूल्यवान पत्थरों के व्यवहार का भी उल्लेख किया। उनके समय में प्रसाधन में प्रयुक्त पौधों एवं व्यवहृत अंशों की सूची निम्न हैं :-

एब्रस प्रिकेटोरिउस (Abrus precatorius)
सं: गुंजा;
हि: रत्ति।
उपयोग : बालों को सफेद होने से रोकना एवं गंजापन में।
व्यवहृत अंश : बीज, फल एवं मूल।

एगल मारमिलोस (Aegle marmelos Corr. ex Roxb.)
सं: विल्व, श्री फल;
हि: बेल।
उपयोग : बालों को लम्बा करने में।
व्यवहृत अंश : कच्चे फल।

ऐलबिजिया लेबेक (Albizia lebbek Benth)
सं: शिरिषा;
हि: शिरीष।
उपयोग : प्रसाधन में।
व्यवहृत अंश : छाल एवं फूल।

एन्जिलिका अरकान्जेलिका (Angelica archangelica L.)
सं: कैन्डा।
उपयोग : खुश्की में।
व्यवहृत अंश: जड़ें एवं फल।

एरेका केटाचु (Areca catechu L.)
सं: पुगाफलम्,
हि : सुपारी।
उपयोग : गंजापन में।
व्यवहृत अंश : जड़ें, छाल एवं फल।

एजाडाइरेक्टा इन्डिका (Azadirechta indica A. Juss.)
सं: निम्ब;
हि: नीम।
उपयोग: मुंह का दुर्गन्ध, बालों का पकना एवं अंगराग में।
व्यवहृत अंश: छाल, पत्ते एवं जड़ें।

बरबेरिस एरिस्टेटा (Berberis aristata DC.)
सं: दारूहरिद्रा;
हि: दार-हल्दी।
उपयोग: गंजापन, त्वचा विकार में एवं होठों के

फटने में।
व्यवहृत अंश: जड़ों की छाल।

ब्रेसिका चाइनेन्सिस (Brassica chinensis Juslen, non Duthie & Full)
सं: सरसप;
हि: सरसों।
उपयोग: चेहरा एवं त्वचारोगों, बालों का गिरना एवं सफेदी रोकने में।
व्यवहृत अंश: बीज एवं तेल।

ब्युटिया मोनोस्पर्मा (Butea monosperma)
सं: पलास;
हि : डाख/पलास।
उपयोग : एलर्जी में।
व्यवहृत अंश : बीज एवं गोंद।

सिसेलपिनीया सप्पन (Caesalpinia sappan L.)
सं: पन्तरंगा;
हि: बकाम।
उपयोग : प्रसाधन में।
व्यवहृत अंश: काष्ठ।

कलिकार्पा मैक्रोफाइला (Callicarpa macrophylla Vahl)
सं: प्रियंगु ;
हि: दाया।
उपयोग : गंजापन, बालों का पकना एवं प्रसाधन में।
व्यवहृत अंश : पुष्प।

कैलोट्रोपिस प्रोसेरा (Calotropis procera (Ait) R. Br.).
सं: अर्क;
हि : मादार।
उपयोग : बालों का भूरा होना एवं गंजापन में।
व्यवहृत अंश : पत्ते, जड़ें और दूध।

केसिया फिस्चूला (Cassia fistula L.)
सं: सुवर्णनिका,
हि: अमलतास
उपयोग : प्रसाधन में।
व्यवहृत अंश : जड़ों की छाल एवं फल।

सिड्रस देवदारा (Cedrus deodara (Roxb.) Lond.)
सं: देवदारू;
हि : देवदारू।
उपयोग : भौहों के पतन एवं गंजापन में।
व्यवहृत अंश : छाल एवं तेल।

क्रोकस सटाइवस (Crocus sativus L.)
सं : कैसमिराजा/केसरा,
हि : केसर।
उपयोग : खुश्की एवं गंजापन में।
व्यवहृत अंश : पुष्प।

कॉर्डिया डाइकोटमा (Cordia dichotoma Forst. f.)
सं: सेलु/बहुमरक,
हि : लसोड़ा।
उपयोग : बालों का पकना दांत एवं त्वचा रोगों में।
व्यवहृत अंश: पत्ते एवं बीज।

कुरकुमा लॉन्गा (Curcuma Longa L.)
सं: हरिद्रा;
हि: हल्दी।
उपयोग : खुश्की, बालों का पकना एवं प्रसाधन में।
व्यवहृत अंश : जड़ें।

कु० जिडोआरिया (C. Zedoaria Rosc.)
सं: सति/करकुरा,
हि : करकुरा।
उपयोग : त्वचा को ठन्ड से बचाता है एवं बालों के काला रखने में सहायक है।
व्यवहृत अंश : जड़ें।

साईपेरस रोटन्डस (Cyperus rotundus L.)
सं: मुस्ता/ पायोधराभा;
हि : मोथा।
उपयोग : खुश्की एवं अगंराग में।
व्यवहृत अंश : जड़ें।

डेल्फिनियम ब्रुनोनियेनम (Delphinium brunonianum Royle)
सं : नगारा
उपयोग : खुश्की एवं बालों को काला रखने में सहायक।
व्यवहृत अंश : जड़ें।

इक्लिप्टा अल्बा
सं : भृंगराज/मरकाभा/केशराज;
हि : भांगड़ा/ मोचकंद।
उपयोग : गंजापन एवं बालों का पकना।
व्यवहृत अंश : पत्तों का रस।

इलेटेरिया कॉरडामोमुम (Elettaria cardamomum Maton)
सं: ऐला/उपकुनचिका,
हि : छोटी ईलायची।
उपयोग : गंजापन में।
व्यवहृत अंश : बीज।

एम्बेलिका आफिसिनेलिस (Embelica officinalis Gaertn)
सं : आमलका/आदिफला/धर्त्ति,
हि : आंवला।
उपयोग : गंजापन, खुश्की एवं बालों के गिरने में।
व्यवहृत अंश : फल।

एम्बेलिया रिबस् (Embelia ribes Burm. f.)
सं : विड्ग/वृषानासना;
हि : बबेरङ्ग।
उपयोग : जुओं को मारने में।
व्यवहृत अंश : बीज।

फाईकस बेंगालेन्सिस (Ficus bengalensis L.)
सं : वट/ बहूपद,
हि : बरगद।
उपयोग : मुखकान्ति में।
व्यवहृत अंश : पत्ते एवं हवाई जड़ें।

ग्लोरिओसा सुपर्बा (Gloriosa superba L.)
सं : लनगली/कालिकारी/अग्निमुखी,
हि: कालिहरी।
उपयोग : पायरिया में।
व्यवहृत अंश : जड़ें या कन्दमूल

ग्लिसाइराईजा ग्लेब्रा (Glycyrrhiza glabra L.)
सं : मधुका/ यष्टिमधु;
हि : मूलहट्टि/जेथिमघ।
उपयोग : खुश्की, मुंह का बदबू, अङ्गराग एवं एड़ीयों के फटने में।
व्यवहृत अंश : जड़ें।

मिलिना आरबोरिया (Gmelina arborea L.)
सं : कासमार्या/गाम्भारी,
हि : गामारी।
उपयोग : बालों का पकना एवं एलर्जी धब्बों में
व्यवहृत अंश : पत्ते।

हेमिडेसमस इन्डिकस (Hemidesmuss indicus R. Br.)

सं : उत्तपला-सरिभा/अनन्त;
हि : अनन्तमूल/मगराबु।
उपयोग : खुश्की में।
व्यवहृत अंश : जड़ें एवं पत्ते।

हिबिसकस रोजासाइनेनसिस (Hibiscus rosa-sinenisis L.)

सं : जपा/रूद्रा;
हि : जसुम
उपयोग :गंजापन एवं मुखकान्ति में।
व्यवहृत अंश : पुष्प।

हारडियम वल्गेरि (Hordeum vulgare L.)

सं : यभा/दिव्या,
हि : जौड।
उपयोग : अङ्गराग, जले हुए स्थानों में
व्यवहृत अंश : बीज।

इन्डिगोफेरा टिंक्टोरिया (Indigofera tinctoria L.)

सं : निली/निलीका/रंगापत्री,
हि : नील।
उपयोग : मुखकान्ति में
व्यवहृत अंश : जड़ें।

लेन्स क्युलिनेरिस (Lens culinaris Medic.)

सं : मसुरा,
हि : मसूर।
उपयोग : मुखकान्ति में।
व्यवहृत अंश : दाल या बीजें।

लेप्टाडिनीया रेटिक्युलेटा (Leptadenia reticulata Wt. & Arn.)

सं : जिवन्तिका,
हि : डोरी।
उपयोग : होठों के फटने में।
व्यवहृत अंश : पत्ते।

मैंगिफेरा इन्डिका (Mangifera indica L.)

सं : आम्र,
हि : आम।
उपयोग : बालों का पकना एवं गंजापन में।
व्यवहृत अंश : बीज।

मेसुआ फेरिया (Mesua ferrea L.)

सं : नागकेशर/हेमा/गजकेशर,
हि : नागकेशर।
उपयोग :खुश्की, गंजापन एवं अङ्गराग में।
व्यवहृत अंश :पुष्प, छाल एवं बीज।

मीमुसॉप्स इलेंगी (Memusops elengi L.)

सं :बकुला, हि :बकुल। उपयोग :दातों को मजबूत रखने में। व्यवहृत अंश :छाल एवं फल।

मीमोसा पुडिका (Mimosa pudica L.)

सं : लज्जालू/लज्जावती,
हि :लाजवन्ती।
उपयोग : घावों में।
व्यवहृत अंश :जड़ें।

नार्डोस्टेकिस जटामांसी (Nardostachys jatamansi DC)

सं : जटा/जटामांसी,
हि :जटामांसी।
उपयोग : बालों का पतन एवं पायरिया में।
व्यवहृत अंश :जड़ें।

निलम्बो न्युसिफेरा (Nelumbo nucifera Gaertn.)

सं : कमलिनी/अम्बुजिनी/पद्म,
हि : कमल/कनवल।
उपयोग : बालों को काला बनाये रखने में

सहायक, पायरिया, एवं अङ्गराग में।
व्यवहृत अंश :जड़ें, पत्ते एवं बीज।

नेरिअम इन्डिकम (Nerium indicum Mill.)
सं : करवीरा/अश्वमारा,
हि : कनेर।
उपयोग : बालों को काला रखने में सहायक एवं आंखों की प्रदाह में।
व्यवहृत अंश : पत्ते एवं जड़ें।

निम्फिया स्टिलेटा (Nymphaea stellata Willd.)
सं : उत्पला/निलोत्पला/निलम्बुजा,
हि : नीलकमल।
उपयोग : बालों के पतन, खुश्की, पायरिया एवं मोटापन के रोकने में सहायक है।
व्यवहृत अंश : पुष्प एवं जड़ें।

ओराईजा सैटाइवा (Oryza sativa L.)
सं : शाली/धान्य,
हि : धान/चावल।
उपयोग : होठों के फटने में।
व्यवहृत अंश : बीज।

पारमेलिया परलेटा (Parmelia perlata Ach.)
सं : शिलाकुसुम/शिलाशिव,
हि : चरेला।
उपयोग : बालों को काला रखने में।
व्यवहृत अंश : पौधा।

फेसियोलस मुंगों (Phaseolus mungo L.)
सं : मशा,
हि : मुंग।
उपयोग : बालों का पकना, गंजापन, चेहरा एवं सिर के बिमारियों में।
व्यवहृत अंश : बीज।

पाइपर नाइग्रम (Piper nigrum L.)
सं : मरीचा,
हि : गोलमिर्च।
उपयोग : खुश्की में।
व्यवहृत अंश : फल।

प्लमबागो जिलेनिका (Plumbago zeylanica L.)
सं : चित्राका,
हि :चिता/चित्रा
उपयोग : मुखकान्ति एवं होठों के फटने में।
व्यवहृत अंश : जड़ें।

प्रुनस सेरास्वाइडिस (Prunus cerasoides D. Don)
सं : पदमाका,
हि : पदाम।
उपयोग : अङ्गराग में।
व्यवहृत अंश : फल।

टेरोकार्पस मारसुपिवम (Pterocarpus marsupium Roxb.)
सं : अरूणा/पितासार,
हि : बीजाशाल/बीजा।
उपयोग : बालों का पकना।
व्यवहृत अंश : पत्ते, छाल एवं गोंद।

प्युनिका ग्रेनेटम (Punica granatum L.)
सं : दाड़िम/डालिमा,
हि : अनार।
उपयोग : मुखकान्ति में।
व्यवहृत अंश : पुष्प एवं फल के छिलके।

रिसिनस कम्युनिस (Ricinus communis L.)
सं : एरन्ड,
हि : एरन्ड।
उपयोग : गंजापन एवं तिल में।
व्यवहृत अंश : जड़ें, फल एवं तेल।

रूबिया कार्डिफोलिया (Rubia cordifolia L.)
सं : मनजिष्ठा,
हि : मनजित।
उपयोग : अङ्गराग में।
व्यवहृत अंश : जडें।।

सेन्टेलम अल्बम (Santalum album L.)
सं : चन्दन/मलयज,
हि : सफेद चन्दन।
उपयोग : आंखों की बीमारियों में एवं अङ्गराग में।
व्यवहृत अंश : काष्ठ एवं तेल।

ससुरिया लप्पा (Saussurea lapa C.B. Clarke)
सं : कुष्ठा,
हि : कुठ।
उपयोग : मुखकान्ति, गंजापन, बालों का पतन एवं अङ्गराग में।
व्यवहृत अंश : जड़ें।

सेमिकार्पस एनाकार्डियम (Semecarpus anacardium L.f.)
सं : भल्लाटक,
हि : भेला।
उपयोग : गंजापन में।
व्यवहृत अंश : छाल।

सिलिनियम टेनुईफोलियम (Selinum tenuifolium Wall.)
सं : मुरा,
हि : खेश।
उपयोग : खुश्की में।
व्यवहृत अंश : जड़ें।

सेसामम इन्डीकम (Sesamum indicum L.)
सं : तिल।
हि : तिल.
उपयोग : खुश्की, बालों का पतन, गंजापन एवं बालों के पकने में।
व्यवहृत अंश : जड़ें, बीज एवं तेल।

सिटेरिका इटालिका (Setarica italica (L.) Beauv.)
सं : कांगु,
हि : कांगनि।
उपयोग : अङ्गराग में।
व्यवहृत अंश : जड़ें।

सिमप्लोकास रेसिमोसा (Symplocas racemosa Roxb.)
सं : लोधड़ा,
हि : लोध।
उपयोग : बदबू हटाने एवं प्रसाधन में।
व्यवहृत अंश : छाल।

सीडा कॉर्डिफोलिया (Sida cordifolia L.)
सं : बला,
हि : कुंगी।
उपयोग : बालों के गिरने में।
व्यवहृत अंश : जड़ें।

सोलेनम इन्डीकम (Solanum indicum L.)
सं : वनवृन्तकी,
हि : वृहता।
उपयोग : गंजापन में।
व्यवहृत अंश : फल।

टरमिनेलिया बेलीरिका (Terminalia bellirica Roxb.)
सं : अक्स/बहेड़ा,
हि : बहेड़ा।

उपयोग : बालों को काला रखने में।
व्यवहृत अंश : फल

ट० **छेबुला** (**Terminalia chebula** Retz.)
सं : हरितकी,
हि : हर्रा।
उपयोग : बालों को काला रखने में।
व्यवहृत अंश : फल

वेलिरियाना हार्डवीकि (**Valeriana hardwickii** Wall.)
सं : बलाका,
हि : टगैर।
उपयोग : अङ्गराग में।
व्यवहृत अंश : जड़ें।

वीथेनिया सोमानिफेरा (**Withania somnifera** Dunal)
सं : अश्वगंधा,
हि : पुनीर/अश्वगंध।
उपयोग : पायरिया में।
व्यवहृत अंश : जड़ें।

जिजीफस मावरिसियाना (**Zeziphus mauritiana** Lam.)
सं : बद्री,
हि : बेर।
उपयोग : चमड़ों का फटना एवं चेहरे के सिकुड़न में।

प्राचीन युग में व्यवहृत एवं उल्लेखित इन पौधों की औषधीय उपयोगिता को देखते हुए वर्तमान प्रयोग के अनुसार इन पर और अधिक शोध किये जाने की आवश्यकता है, जिससे अधिक से अधिक मानव कल्याण हो सकें।

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के कुछ महत्वपूर्ण नये प्रकाशन

पत्रिका

(दी बुलेटिन ऑफ दी बाटनिकल सर्वे ऑफ इण्डिया वेजिटेशन, टैक्सोनामी, इकोलोजी, साइटोलोजी व आर्थिक वनस्पति के अध्ययन सम्बन्धी पादप विज्ञान की तिमाही पत्रिका)

खण्ड XXV (1983) सिल्वर जुबली वाल्युम : रु० 250/- $ 80. 00 या £ 40. 00

द्विशतवार्षिकी खण्ड

खण्ड XVIII (1986) : रु 500/- या $ 160. 00 या £ 80. 00

खण्ड XXIX (1987) : रु 828/- या $ 260. 00 या £ 132.00

पिछले खण्ड भी उपलब्ध है खण्ड XXXII (1990) मुद्रणाधीन

फ्लोरा ऑफ इण्डिया सीरिज

फेसिकल 19 (एलेंजिएसी बर्मेनिएसी, कोक्लोस्पर्मेसी, कोनेंसी, लार्डिजेवेलेसी, लोबेलिएसी, मैल्वेसी व निसेसी (पेज 1-251), 1988, रु 280/- या $ 60. 00 या £ 40. 00

फेसीकल 20 (बार्क्लेयेसी, कबोम्बेसी, नेलुबोनेसी, निम्फिएसी, सेबिएसी, स्टैकिरेसी, सिम्लीकेसी, टेट्रेसेंट्रेसी, जाइगोफिलेसी) (पेज 1-944+13) 1990 रु 84/- या $ 28.00 या £ 20. 00

स्टेट फ्लोरा एनेलसिस : सीरिज 5B2

फ्लोरा ऑफ तमिलनाडु, एडिटेड बाय ए एन हेनरी वी० चित्रा एण्ड एन पी बालकृष्णन वाल्युम 3 (पेज 1-171) 1989 : रु 84/- 2600 या £ 12.00 (खण्ड 1 व 2 भी उपलब्ध हैं)

फ्लोरा ऑफ राजस्थान, एडिटेड बाय बी बी शेट्टी व बी सिंह खंड 1(1-451) 16 रंगीन व 20 श्वेत-श्याम फोटो 1987 रु 400/- या $ 80.00 £ 60. 00

वाल्युम 2 (पेज 453-860) 1991 : रु 144/- $ 42.00 या £ 20. 00

खंड 3, रु 168.00 $ 52.00

फ्लोरा ऑफ सौराष्ट्र - पी बी बोले एण्ड जे एम पाठक

पोर्ट II (पेज 1-302+4) 1988 : रु 104.00 $ 3200 £ 1400

पोर्ट II (पेज 303-553) 1988 : रु 80/- $ 24.00 या £ 12.00

फ्लोरा ऑफ केरल-ग्रासेज : पी वी श्री कुमार एवं वी जे नायर (पेज 1-470, 96 इलेस्ट्रेशन्स) 1991 रु 268/- या $ 56.00 या £ 30. 00

डिस्ट्रिक्ट फ्लोराज : सीरिज 5B3

फ्लोरा ऑफ नल्लमलै - जे एल इलिस, वाल्युम। (पेज 1-220, 9 फोटो + 1 मैप) 1987: रु 72/- या $ 24.00 या $ 12.00

वाल्युम 2 (पेज 221-490) 1990 : रू 76/- या $ 24.00 या $ 24.00 या $ 12.00

फ्लोरा ऑफ पालघाट डिस्ट्रिक्ट (इनक्लुडिंग साइलैण्ट वैली नेशनल पार्क, केरल) इवज्रबेलु (पेज 1-646+15 श्वेत-श्याम फोटो) 1990 रू 276/- या $ 56.00 या $ 36.00

फ्लोरा ऑफ नासिक डिस्ट्रिक्ट - पी लक्ष्मीनरसिंहन एण्ड बी० डी० शर्मा (पेज 1-644 + 8 श्वेत श्याम फोटो + 6 रंगीन फोटो) 1991 रु 320/- या $ 64.00 या $ 36.00

फ्लोरा ऑफ महाबालेश्वर डिस्ट्रीक्ट. खंड I देशपांडे, शर्मा एंड नायर : रु 228/- $ 48.00 खंड II मुद्रणाधीन

विशेष व विविध प्रकाशन : सीरिज 4

आइकोन्स राक्सबर्गिएनी

फेसिकल II ★ (पेज 1-51) 1968 एण्ड III★ (पेज 1-49) 1969 रु 16 या $ 4.00 या £ 2.00 प्रति फेसिकल,

फेसिकल IV ★ (पेज 1-57) 1970 V★ (पेज-1-52) 1971 एण्ड VI (पेज 1-51) 1973 : रु 20/- या $ 6.00 या £ 3.00 प्रति फेसिकल,

फेसिकल VII (1-51) 1976 एण्ड VIII (पेज-1-53) 1978 रु 32/- या $ 8.00 या £ 4.00 प्रति फेसिकल

फाइकोलोजिया इण्डिका - के एस श्रीनिवासन, वाल्युम I ★ (पेज 1-52) 1969 : रु 31/- या $ 7.00 या £ 3.00, वाल्युम II (पेज 1-60) 1973 : रु 56/- या $ 13.00 या £ 6.00

भारत की वनस्पति ★ - हिन्दी प्रकाशन (पेज 1-179) 1984 : रु 35.00.

टाइप कलेक्शन्स इन दी सेन्ट्रल नेशनल हर्बेरियम - यू पी समाद्दार : वाल्युम II (पेज 1-128) 1991 : रु 64/- या $ 22.00 या £ 16.00

इकोनामिक प्लांट्स ऑफ इण्डिया - एम पी नायर एट आल, वाल्युम I (पेज 1-159) 1989 : रु 74/- या $ 24.00 या £ 12.00 खंड II मुद्रणाधीन

नेटवर्क ऑफ बाटनिक गार्डेन्स- सम्पादित एम पी नायर (पेज 1-159) 1987 : रु 460/- या $ 80.00 या £ 12

रेड डाटा बुक ऑफ इण्डियन प्लाण्ट्स - एडिटेड बाय एम पी नायर एण्ड ए आर के शास्त्री वाल्युम I (पेज 1-383, 8 फोटो) 1987 : रु 160/- या $ 48 या £ 22.00

वाल्युम II (पेज 1-123, 6 फोटो) 1988 : रु 132/- या $ 40. 00 या £ 18.00

वाल्युम III (पेज 1-278, 4 फोटो) 1989 : रु 188/- या $ 56 या £ 24

फ्लोरा इण्डिके इन्यूरेशियो : मोनोकोटिलिडोनी - एस कार्तिकेयन, एस के जैन, एम पी नायर एण्ड एम संजप्पा (पेज 1-435 + 3) 1989 रु 160/- या $ 48.00 या £ 22.00,

ए डाइरेक्टरी ऑफ बाटनिक गार्डेन्स एण्ड पार्क्स इन इण्डिया - आर के चक्रवर्ती एण्ड डी पी मुखोपाध्याय (पेज 1-192, 8 फोटो) 1990 : रु 132/- या $ 40.00 या £ 18.00

फ्लोरा ऑफ तरोबा नेशनल पार्क : एस के मलहोत्रा एंड एस० मूर्ति रु 88.00 या $ 24.00
सी ग्रासेज ऑफ कोरोमंडल कोस्ट : राममूर्ति एंड बालकृष्णन : रु 140.00 $ 44.00 या £ 24.00
क्लैरवर्ट्स ऑफ इंडिया : एम के जनार्दन एंड ए एन हेनरी : रु 72.00 $ 24.00 £ 12.00
मैनग्रोव्स इन इण्डिया - आइडेंटिफिकेशन मैनुअल, एल के बनर्जी, ए आर के शास्त्री, एम पी नायर (पेज 1-113, 30 फोटो) 1989 : 168/- या $ 52.00 £ 24.00

ए मैनुअल फॉर हर्बेरियम कलेक्शन्स- आर आर राव व बी डी शर्मा (पेज 1-20+1) 1990 : रु 8/-

उपरोक्त प्रकाशन निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पी-8, ब्रेबोर्न रोड, कलकत्ता-700001. भारत से खरीद की जा सकती हैं । प्रकाशन वी पी पी से नहीं भे जा जाता है । उचित मू ल्य धनादे श द्वारा प्रकाशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण को अग्रिम भेजते हुए अपना नाम व पता स्पष्ट लिखें। ड्राफ्ट "एकांउट्स ऑफिसर, पी ए ओ (बी एस आइ एण्ड जेड एस आई) कलकत्ता" के पक्ष में प्रकाशन अधिकारी को उपरोक्त पते पर प्रेषित करें।

समाचार

सितम्बर 1992 के दूसरे सप्ताह में भा व स के विभिन्न कार्यालयों में हिन्दी दिवस समारोह के अवसर पर विभिन्न कार्यक्रम हुए। इनमें हिन्दी निबन्ध, हिन्दी वाद-विवाद, हिन्दी काव्य पाठ प्रतियोगिता हिन्दी में मुद्रित या चक्रमुद्रित सामग्री आदि के प्रदर्शन को प्रधानता दी गई।

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के मुख्यालय में समारोह की अध्यक्षता डा० बी० डी० शर्मा, निदेशक ने की। प्रतियोगिताओं के लिए परिणाम की घोषणा निम्नलिखित रुप में हुई

निबन्ध प्रतियोगिता (अहिन्दीभाषी समूह)

१.	श्री सुरजीत घोष	प्रथम
२.	श्री रवीन चटर्जी	द्वितीय
३.	श्री अशोक बसु	तृतीय
४.	श्री मिहिर गांगुली	तृतीय

निबन्ध प्रतियोगिता (हिन्दी भाषी समूह)

१.	श्री संजीव कुमार	प्रथम
२.	श्री मिरी राम	द्वितीय
३.	श्री एस आर काम्बले	तृतीय

वाद-विवाद प्रतियोगिता (अहिन्दीभाषी समूह)

१.	श्री रवीन चटर्जी	प्रथम
२.	श्री अनूप चटर्जी	द्वितीय
३.	श्री विश्वनाथ साहा	तृतीय

वाद-विवाद प्रतियोगिता (हिन्दी भाषी समूह)

१.	श्री संजीव कुमार	प्रथम
२.	श्री एल आर दरियानानी	द्वितीय

सिक्किम हिमालय परिमंडल, गांतोक के हिन्दी दिवस समारोह के मुख्य अतिथि श्री एन सी शेंगा, सचिव, वन विभाग, सिक्किम सरकार ने हिन्दी निबन्ध प्रतियोगिता के लिए पुरस्कार वितरण किया-

१.	श्री सुन्दर राई	प्रथम पुरस्कार
२.	श्री इन्द्रा तूती	द्वितीय पुरस्कार
३.	श्री यादव दीवान	तृतीय पुरस्कार
४.	श्री दीनानाथ राय	सांत्वना पुरस्कार

भा व स के अन्य कार्यालयों में भी हिन्दी दिवस समारोह उल्लासपूर्वक मनाते हुए राजभाषा विभाग के आदेशों को पालन करने का संकल्प लिया गया।

कार्यालय व प्रयोगशाला : येरकॉड

डा० (श्रीमती) अर्चना शर्मा द्वारा वृक्षारोपण

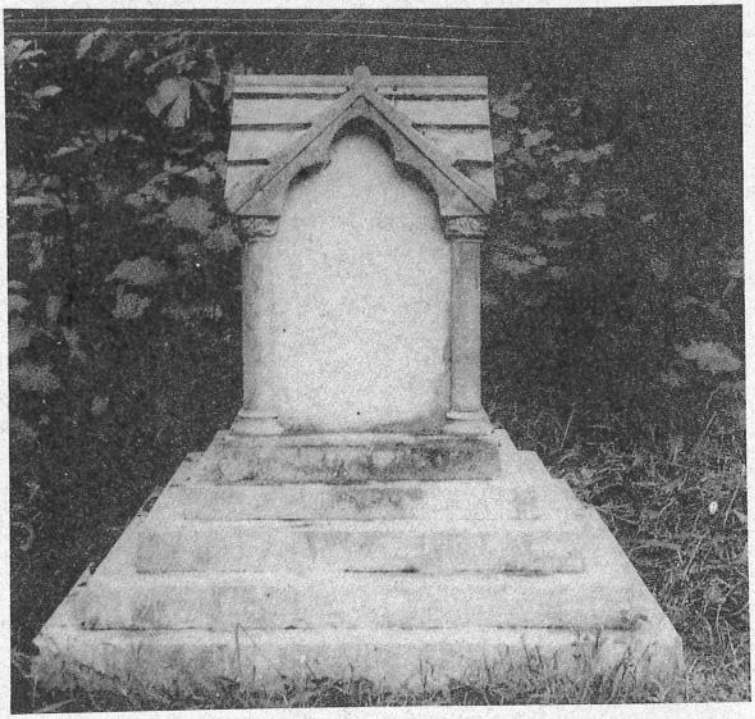

विलहेल्म एस कुर्ज स्मृति स्तम्भ

विलियम जैक स्मृति स्तम्भ

6 जुलाई 1982 : प० बंगाल के राज्यपाल श्री बी० डी० पाण्डेय द्वारा वृक्षारोपण

ग्रिफिथ स्मृति स्तम्भ

8 अगस्त 1986 : अध्यापक अरुण कुमार शर्मा द्वारा वृक्षारोपण

6 जुलाई 1987 : प्रो० एच० वाई० मोहनराम द्वारा वृक्षारोपण

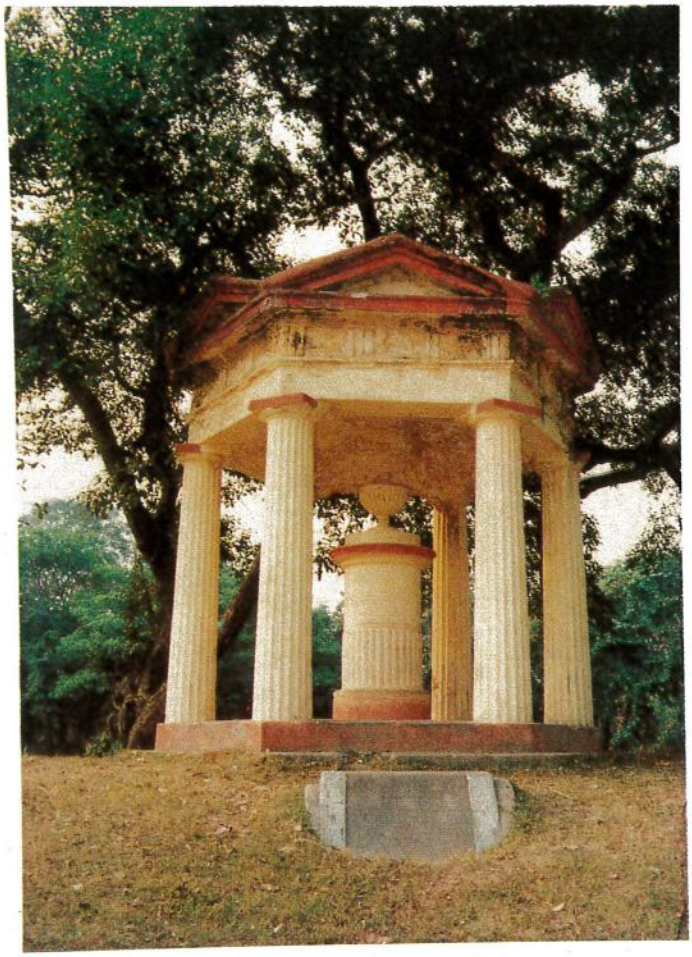

विलियम राक्सबर्ग स्मृति स्तम्भ

वन महोत्सव के सिलसिले स्कूलों के विद्यार्थियों द्वारा वृक्षारोपण

एराइडिस आर्किड की एक जाति

निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पी:8, ब्रेबोर्न रोड, कलकत्ता-700 001 द्वारा प्रकाशित एवं लेसर कम्पयुटर, 31, स्टीफेन हाऊस, 4, बी० बी० डी० बाग, कलकत्ता-700 001, फोन - 2201760 द्वारा मुद्रित।